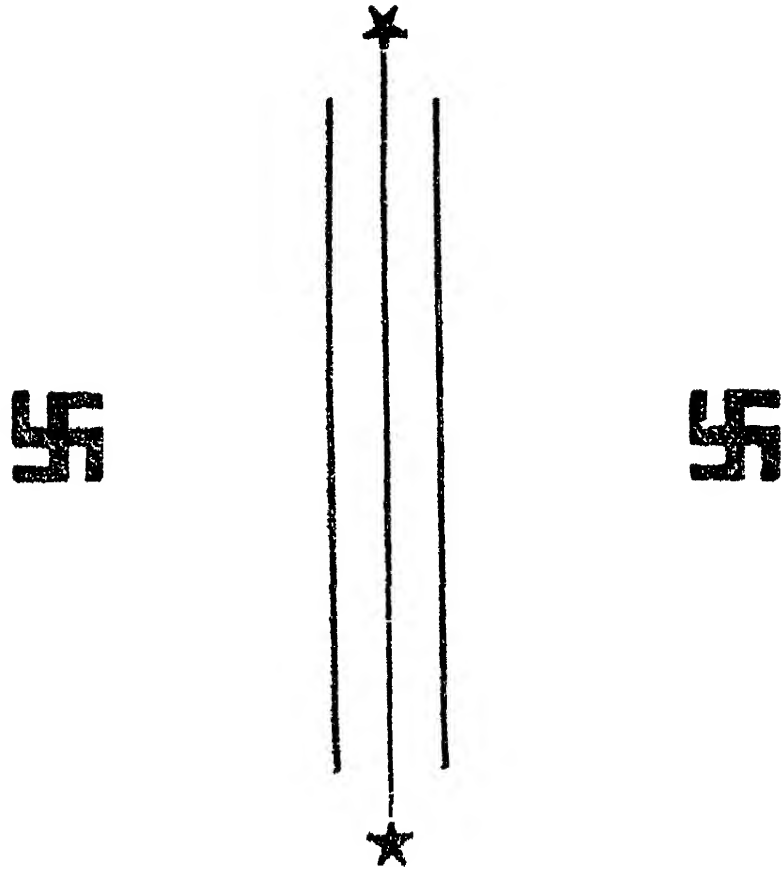




श्री गोरख बोध वाणीसंग्रह



प्रकाशक :

फूलचन्द बुकसेलर
पुरानी मंडी, अजमेर (राज०)

सर्वाधिकार सुरक्षित

॥ ॐ ॥

श्री गोरख बोध

❀ भजनमाला ❀

सर्वश्री मच्छंद्रनाथजी और गोरखनाथजी महाराज का
प्रश्नोत्तर, श्री दत्तात्रेय स्वामी एवं गोरख संवाद
तथा असूतपूर्व ज्ञान-रोचकता मय
भजनों का वर्णन है ।

卐

त्रिपि अनुबोधक—टीकाकार

[भारतीय समाज दर्शन, पिंगल रहस्यादि ग्रन्थों के रचयिता]

स्वामी रामप्रकाशजी महाराज अग्रवत

जोधपुर (निवासी)

卐

5050581
Chentarekshita Library
प्रकाशक Tibetan Institute-Sarnath

फूलचन्द बुकसेजर

पुरानी मण्डी, अजमेर (राज०)

[तृतीय संस्करण] सर्वाधिकार सुरक्षित [मूल्य ७)००

❀ विषय-सूची ❀

| विषयांक | विषय |
|---------|------------------------------|
| १ | गुरु-शिष्य शंका समाधान |
| २ | गोरख दत्तात्रेय संवाद |
| ३ | गोरख गणेश गोष्ठी-संवाद |
| ४ | ज्ञान-तिलक |
| ५ | अभय मात्रा कथन |
| ६ | बत्तीस लक्षण-ज्ञान परीक्षा |
| ७ | सृष्टि पुराण वर्णन |
| ८ | चौबीस सिद्धि कथन |
| ९ | आत्म बोध कथन |
| १० | पंचाक्षरी कथन |
| ११ | रहस्य कथन |
| १२ | दया बोध कथन |
| १३ | ज्ञान माला कथन |
| १४ | रोमावली अंग कथन |
| १५ | पंच मात्रा कथन पंच अग्नि |
| १६ | शिक्षा दर्शन |
| १७ | अष्ट मुद्रा-अष्ट चक्र |
| १८ | नरप बोध |
| १९ | आत्म बोध |
| २० | भजन माला का भजन भाग प्रारम्भ |

श्री गोरखनाथजी का संक्षिप्त जीवन परिचय

नाथ परम्परा के आदि आचार्य जलंधरनाथजी के शिष्य मतान्तर भेद से गुरुभाई कौल ज्ञानी योगीराज मत्स्येन्द्रनाथजी का अस्तित्व काल अनुमानतः विक्रम की दशवीं शताब्दी के आसपास में अपने प्रमुख शिष्य महान सिद्ध-योगी और प्रसिद्ध महापुरुष गोरखनाथजी (जिनके जीवन वृत्तान्त आदि के बारे में अनेकों धारणाएँ हैं) जिनका जन्म विक्रम संवत् की दशवीं शताब्दी के अन्त में अथवा ग्यारहवीं शताब्दी के आदि में होना साहित्य-इतिहास साक्ष्य है ।

तर्क की सामयिक-कसौटी से इन कौल ज्ञान सम्प्रदाय के महापुरुषों का होना विक्रम संवत् के प्रारम्भ से दशवीं या ग्यारहवीं शताब्दी में होना है क्योंकि प्रसिद्ध भर्तृहरि महाराज तथा गोपीचन्द्र आदि के राज-त्याग तथा योग शिक्षा ग्रहण करने का समत्व काल वहीं पाया जाता है ।

यह उन्हीं महापुरुषों की वाणी विक्रम संवत् १८३६ मिति आषाढ़ कृष्ण पक्ष ६ बृहस्पतिवार से श्री रामजीदासजी महाराज के पौत्र शिष्य, श्री तुलसीदासजी के शिष्य बीरम-दासजी के हस्ताक्षर द्वारा लिखित पाण्डुलिपि मुझे प्राप्त

हुई जिसे प्राचीन लिपि-भाषा से अनुबोद्धन करके बड़े परिश्रम से टीका बनाकर परिवर्द्धित-संशोधित रूप में पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत किया। जिसे श्री “फूलचन्दजी” व्यवस्थापक :—आर्य ब्रदर्स, पुरानी मण्डी, अजमेर ने प्रकाशित किया। तदर्थ सर्वाधिकार प्रकाशक द्वारा स्वरक्षित है।

आशा है आध्यात्मिक जगत में एक विशेष प्रमाणिक विशुद्धता के साथ साहित्य की समावृद्धि हुई है जिसे देखकर आप महानुभावों के हृदय में बड़ा सन्तोष-भाव उत्पन्न होगा। इसमें यथासाध्य शब्द पाण्डूलिपि के जैसे के तैसे रखने का प्रयास किया है ताकि आन्तरिक भाव की प्राचीनता-भाव-गांभीर्यता बनी रहे। तद्यपि कहीं-कहीं पर जैसे—हृद = हृदय, निरभै = निर्भय, अनुभै = अनुभव, बूझ्यां = पूछ्यां, जोति = ज्योति आदि शब्दों की लिपि को समानार्थक आधुनिक-उत्तमता को ध्यान में रखते हुए रूप दिया है, ताकि पाठकों को भ्रामिक उलझन न हो सके।

तथांत पाठकों के लाभार्थ कुछ भजन संग्रहित भी देकर पुस्तक को उपयोगी बनाने का पूर्णतः प्रयास किया गया है।



गोरखनाथजी का शास्त्र

-उर्फ-

गोरखबोध मञ्जनमाला

श्री गुरु शिष्य शंका समाधान

गोरख उवाच (१)

स्वामीजी तुम गुरु गोसाईं, अम्हेज शिष शब्द एक बूझिबा
दया करि कहबा, मन कुनि करि बाशेस ?

प्रारंभ चेला कैसे करि रहै ? सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥१

भावार्थ—गोरखनाथजी अपने श्री गुरुदेव से पूछते हैं कि स्वामीजी ! मैं एक शब्द शिष्य होकर पूछता हूँ जिसका उत्तर कृपा कर कहो—यह मन कैसे वश में होता है ? शिष्य को प्रारम्भ में साधक अवस्था में कैसे रहना चाहिए ? शिष्य के प्रश्नों का सत्य उत्तर देवें वही सतगुरु है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू रहबा तो हाटां बाटां, रूख वृक्ष की छाया ।
तजि बातों काम क्रोध लोभ मोह संसार की माया ॥
आप सूँ गोष्ठि अनन्त विचार निद्रा अल्प अहार ।
आरंभ चेला ऐसे रहै, गोरख सुणो मछन्द्र कहै ॥२॥

भावार्थ—हे शिष्य ! साधक को चाहिए कि आरम्भिक अवस्था में किसी एक जगह जगत-प्रपची पुरुषों में न रहे और मार्ग, धर्मशाला या किसी वृक्ष की छाया में विश्राम करे और संसार की संसृति, ममता, अहंता, कामना, क्रोध, मोह, लोभ वृत्ति का धारणाओं को त्याग कर अपने आत्म तत्त्व का चिंतन करे । कम भोजन तथा निद्रा आलस्य को जीतकर रहे ।

गोरख उवाच (२)

स्वामोजी ! कोण देखना कोण विचारना,
कोण तत्त ले धरिवा सार ।

कोण देश मस्तक मुंडाईया,

कौण ज्ञान ले उतरवा पार ।३।

भावार्थ—हे गुरु ! साधक को क्या देखना ? क्या विचार करना, किस तत्त्व में वास करना, किसके लिये सिर मुंडा कर, किस ज्ञान को लेकर पार उतारना चाहिए ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू आपा देखिबा, अनंत विचारवा, तत्त ले धरिवा सार ।
गुरु का शब्द ले मस्तक मुंडाईबा, ब्रह्म ज्ञान ले उतरवा पार ।४

भावार्थ—हे शिष्य ! अपने आप को देखना, अनंत अगोचर को विचारना और तत्त्व-स्वरूप में वास करना, गुरु-नाम सोहंशब्द ले मस्तक मुंडावे तथा ब्रह्मज्ञान को लेकर भवसागर पार उतरना चाहिए ।

गोरख उवाच (३)

स्वामीजी मन का कौण रूप, पवन का कौण आकार ।

दम की कौण दशा; साधिबा कौण द्वार ॥५॥

भावार्थ—हे गुरु ! मन का स्वरूप क्या है ? पवन का आकार क्या है ? प्राणों को दशा क्या है ? और किस द्वार की साधना करनी चाहिए ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन का शून्य रूप, पवन का निरालंब आकार ।

दम की अलेख दशा, साधिबा दसर्वे द्वार ॥६॥

भावार्थ—हे शिष्य ! मन का शून्य रूप है, पवन का निरालंब आकार है, दम की अलेख दशा और दसर्वे द्वार की साधना करनी चाहिए ।

गोरख उवाच (४)

स्वामीजी ! कोण पड़े बिन डाल, कौण पंख बिन सूआ ।

कोण पाल बिन नार, कौण बिन कोल मूआ ॥७॥

भावार्थ—हे गुरु ! जड़ के बिना डाल क्या है, पांखों के बिना पक्षी कौन है ? किनारे बिना नारि कौन है ? और काल बिना कौन मर सकता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू पवन पेड़ बिन डाल, मन पंख बिन सूआ ।

धीरज पाल बिन नार, निद्रा बिन काल सूआ ॥८॥

भावार्थ—हे शिष्य ! वायु बिना पेड़ के डाल (टहनी) है, मन पक्षी बिना पांखों के धीरज बिना पाल (किनारे) को नार (नदी) और बिना काल रूप नींद है ।

गोरख उवाच (५)

स्वामीजी ! कौण बीरज कौण खैत्र, कौण श्रवण कौण नेत्र ।

कौण जोग कौण जुक्ति, कौण मोक्ष कौण मुक्ति ॥९॥

भावार्थ—हे गुरु ! किस खेत में बीज क्या है ? श्रवण क्या है ? नेत्र क्या है ? किस जोग में जुगती क्या है ? और मोक्ष किसको कहते हैं, मुक्ति किसको कहते हैं ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मंत्र बीरज मति क्षेत्र, सुरति श्रवण निरती नेत्र ।

करम जोग धूरम जुगति, ज्योति मा बिजवाला मुक्ति ॥१०॥

भावार्थ—हे शिष्य ! बुद्धि रूपी खेती में मंत्र-जप का बीज फल देता है । अन्तःकरण का सुरता रूप वृत्ती को श्रवण तथा निरति चक्षु दृष्टि को नेत्र कहते हैं । कर्तव्ययोग, धर्म ही युक्ति और त्राटक साधन से त्रिकुटी स्थान ज्योति दर्शन ही बिना ज्वाला की मुक्ति है ।

गोरख उवाच (६)

स्वामीजी ! कौण मूल कौण बेला, कौण गुरु कौण चेला ।

कौण खैत्र कौण मेला, कौण तत ले रमे अकेला ॥११॥

भावार्थ—हे गुरु ! वृक्ष का मूल को सहारा क्या है, गुरु कौन है ? चेला कौन है ? स्थान क्या है ? मिलाप क्या है ? और किस तत्त्व को धारण करके अकेला विचरण करता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन मूल पवन बेला, शब्द गुरु सुरतो चेला ।
त्रिकूटि क्षेत्र उलटि मेला, निरवाण तत ले रमो अकेला ॥१२

भावार्थ—हे शिष्य ! मन रूपी मूल का पवन सहारा है । शब्द सतगुरु, अन्तःकरण की एकांत सुरति वृत्ति चेला है । त्रिकूटी स्थान पर उलट कर जोव-ईश्वर का मिलाप होता है, निरवाण ब्रह्म तत्त्व के आधार पर निवृत्ति परका अकेला विचरण करो ।

गोरख उवाच (७)

स्वामीजी ! कोण घर चंद कोण घर सूर,
कोण घर काल बजावे तूर ।
कोण घर पांच तत्त्व सम रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१३

भावार्थ—हे गुरु ! स्वरोदय में चन्द्र कहां है ? सूर्य को स्थान कहां है ? काल किस घर में नाद बजाता है ? पांचों तत्त्व बराबर किस स्थान पर रहते हैं ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन घर चंद पवन घर सूर,
शुन घर काल बजावे तूर ।

ज्ञान घर पांचों तत सम रहे,

ऐसा विचार मछंद्र कहे ॥१४

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के स्थान चन्द्र, पवन के संग में सूर्य शून्य के स्थान में काल का नाद बजता है, ज्ञान के स्थान में पांचों तत्व की समता रहती है ।

गोरख उवाच (८)

स्वामीजी कोण अमावस कौण पड़वा,

कहां का महा रस कहां ले चढ़िबा ?

कौण स्थान मन उनमुनि रहे,

सतगुरु होय सो पूछयां कहे ॥१५

भावार्थ—स्वर स्थान में अमावस का क्या है ? पड़वा (शुक्ल प्रतिपदा) क्या है ? कहां का महारस आनन्द लेकर कहां पर चढ़ता है । किस स्थान पर मन का अवधान अन्तर्ध्यान रहता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! रवि अमावस चंद्र सू पड़वा,

अर्ध का महारस ऊर्ध ले चढ़िबा ?

गगन स्थाने मन उनमुनि रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे,

भावार्थ—गुरु मच्छन्द्रजी कहते हैं—हे शिष्य सूर्य स्वर अमावस, चन्द्र स्वर प्रतिपदा, नाभी स्थान का प्राण रस लेकर गगन स्थान चढ़ता और दशवें में मन अन्तर्ध्यान रहता है ।

गोरख उवाच (६)

स्वामीजी आदि का कौण गुरु, धरती का कोण भरतार ।
ज्ञान का कोण स्थान है, शुन का कहाँ है द्वार ॥१७

भावार्थ—हे गुरु ! ज्ञान कौन है ? पृथ्वी का पति कौन है ? ज्ञान का स्थान कौन है ? शुन का द्वार कहाँ है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! आदि का अनादि गुरु, धरती का अंबर भरतार ।
ज्ञान का स्थान चितन है, शुन का परचा द्वार ॥१८

भावार्थ—हे शिष्य ! आदि का गुरु अनादि है, पृथ्वी का पति आकाश है, ज्ञान का चितन में निवास है और शून्य का स्थान परचा (ब्रह्म) है ।

गोरख उवाच (१०)

स्वामीजी कौण परचे माया मोह छूटे,
कौण परचे शशि सूर फूटे ।

गौण परचे लागे बंध,

कौण परचे अजरावर कंध ॥१९

भावार्थ—हे गुरु, किस साधन से माया मोह बंधन की निवृत्ति होती है, किस परचे (साधन) से चन्द्र-सूर्य स्वर की सिद्धि होती है । किस साधन से योग-बंध की सिद्धि तथा किस साधन से उजर बंध की सिद्धि होती है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन परचे माया मोह छूटे,
 पवन परचे शशि घर फूटे ।
 कान परचे लागे बंध,
 गुरु परचे अजरावर कंध ॥२०

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के परचे (साधे-वश करने) से माया मोह की निवृत्ति, पवन वश करने से चन्द्र-स्वर-सिद्धि तथा ज्ञान सिद्धि से योग बंध (जीव ईश्वर एकता) गुरु की प्रसन्नता से अजर बंध (जीवन मुक्ति तत्व) सिद्धि की प्राप्ति होती है ।

गोरख उवाच (११)

स्वामीजी ! कहां बसे मन कहां बसे पवन,
 कहां बसे शब्द कहां बसे चंद ।
 कौन स्थान ए तत रहे,
 सतगुरु होय सो पूछ्याँ कहै ॥२१

भावार्थ—हे गुरु ! मन का निवास कहां है ? पवन का वास कहां है ? शब्द का निवास ? चन्द्र का निवास कहां है ? किस स्थान पर तत्व का वासा है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय बसे मन, नाभी वसे पवन,
 रूपे बसे शब्द गगन बसे चन्द्र ।
 अर्ध स्थाने ए तत रहे,
 ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥२२

भावार्थ—हे योगी ! मन का वास हृदय में, पवन का नाभी में, शब्द का आवास रूप में, चन्द्र-सिद्धि का वासा गगन (दशर्वे) में तथा तत्त्व शब्द का वासा निम्न (नाभी) स्थान में है ।

गोरख उवाच (१२)

स्वामीजी ! हृदय न होता तब कहां होता मन,
नाभी न होती तब कहां रहता पवन ।
रूप न होता तब कहां रहता शब्द,
गगन न होता तब कहां रहता चंद्र ॥२३

भावार्थ - हे स्वामी ! जब हृदय एक देश वाची स्थान नहीं था तब मन का वासा कहां था ? नाभी वाचक स्थान नहीं होने से पवन कहां रहता ? रूप की उत्पत्ति से पहले शब्द कहां था ? गगन (दशवां) होने से पहले चन्द्र कहां रहता था ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय न होता तब शुन रहता मन,
नाभी न होती तब निरमल निरंकार होता पवन ।
रूप न होता तब शुन्नि रहता शब्द,
गगन न होता तब अन्तरिक्ष रहता चंद ॥२४

भावार्थ—हे अवधू ! हृदयवाची स्थान में होने से मन शून्यकार रहता, नाभी के अभाव में स्पंद निपंस्द अलंकार रहित पवन रहता । रूप के अभाव में शब्द शून्य रहता, गगन न होने के समय चन्द्र (सिद्धि) ब्रह्म-लुप्त रहता ।

गोरख उवाच (१३)

स्वामीजी ! रात्रि होती दिन कहां ते आया,
दिन होते रात्रि कहां समावे ।

दीवा बुझाना ज्योति कहां लिया बास,
पिंड न होता तब कहां प्राण का निवास ॥२५

भावार्थ—हे गुरुदेव ! रात्री थी तब दिन कहां से आया और दिन (प्रकाश) होते ही रात्री (अंधकार) का लीन-भाव कहां हों जाता है ? दीपक बुझने पर ज्योति कहां लय होती है ? शरीर नहीं था तब प्राण-शक्ति का निवास कहां था ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू रात्री होती दिन सहजे आया,
दिन प्रकाश रात्रि सहज समाया ।

दीवा बुझाना ज्योति निरंतर बास,
पिंड न होता तब प्राण का शुद्ध निवास ॥२६

भावार्थ—हे योगी ! अज्ञानान्धकार भूल माया प्रकृति स्वरूप अनिच्छा रात्रि में चेतनत्व-घन शक्ति प्रकाश का सहज ही समावेश हुआ तब ज्ञान-प्रकाश चेतन प्रभाव से अज्ञान तिमिर जड़ भाव स्थितत्व का विलीन हो गया । दीपक (मानव शक्ति) के बुझने पर चैतन्य-ज्योति चिदाकाश कूटस्थ (निरन्तर) में वास करती है । शरीर न होने पर प्राण का शून्याकाश में तत्त्व रूप सूक्ष्मांश निवास था ।

गोरख उवाच (१४)

स्वामीजी ! काया मध्ये के लख चंद्र,
 पुहुप मध्ये कहां बसे गंध ।
 दूध मध्ये कहां बसे घीव,
 पिण्ड मध्ये कहां बसे जीव ॥२७

भावार्थ—हे गुरु ! शरीर में चंद्र का निवास कहां है ?
 फूल में सुगंध का वास कहां है ? दूध में घी तथा शरीर में जीव
 का आवास कहां-कहां पर है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू काया मध्ये दबेला चंद्र, पुहुप मध्ये चेतन गंध ।
 दूध मध्ये निरंतर घीव, पिण्ड मध्ये सर्व व्यापक जीव ॥२८

भावार्थ—शरीर में स्वरोदय इडा नाडी तथा त्रिकूटी स्थाने
 दो चंद्र स्थान, पुष्पों में चैतन्य-सामान गंध पूर्ण रहती है । दूध में
 घी अन्तरहित व्याप्त तथा इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक रोमांश में
 जीवात्मा की अव्यहृत शक्ति रहती है ।

गोरख उवाच (१५)

स्वामीजी कहां बसे चंद्र कहां बसे सूर,
 कहां बसे नाद बिंद का मूर,
 कहां चढि हंसा पोवे पाणी,
 कौण शक्ति प्राण घर आणी ॥२९

भावार्थ—हे गुरु ! अन्तरहित साधना-मार्ग में चन्द्र,
 सूर्य तथा नाद, बिंद का स्थान कहां-कहां पर है । हंसा कहां

की उत्पत्ति पद आरूढ़ता से शांति की बून्द पीता है और प्राणभवन में किस शांति का केन्द्र-बिन्दु लाया जाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू उर्ध्व बसे चन्द्र अर्ध्व बसे सूर,
हृदय बसे नाद बिंदु जो मूर ।
गगन चढि हंसा पीवे पाणी,
उलटि शक्ति आप धरि आणी ॥३०

भावार्थ—हे शिष्य ! अन्तरहित साधना में गगन (दशवें) स्थान चन्द्र (ज्ञान ध्येय) और निम्न नाभी स्थाने अग्नि-नागदि नाड़ी में सूर्य का निवास है । शब्द का निवास हृदय में है जो बिन्दु का मूल स्रोत-केन्द्र है । जीवात्मा पवन-कसौटी से दशवें चढ़कर शान्ति बून्द को प्राप्त करता है । अपनी शक्ति को उलटि कर स्थिर की गई ।

गोरख उवाच (१६)

स्वामीजी ! कहाँ उत्पत्ति ते नाद, कहाँ नाद समि भवते ।
कौण ले स्थापिते नाद, कहाँ नाद विलियते ॥३१

भावार्थ—हे गुरु ! शब्द की उत्पत्ति कहाँ होती है । और शब्द कहाँ समभाव, कहाँ स्थापन, एवं कहाँ विलय होता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू औंकार उत्पत्ति ते नाद, नाद शुभ सम भवति ।
पवन ले स्थापिते नाद, नाद निरंजन विलियते ॥३२

भावार्थ—हे शिष्य ! ओ३मकार बीजमन्त्र से शब्द की उत्पत्ति, शून्याकाश में नाद की समता पवन (वायु) के संग से (शब्द ध्वनि) की स्थिरता और निरञ्जन (महाकाश गगन) एक्यता में शब्द का विलय हो जाता है ।

गोरख उवाच (१७)

स्वामीजी ! नादे न नादिवा बिदे न बिदवा,

गगने न लाईबा आशा ।

नाद बिद दोऊ ना होईगा,

तब प्राण का कहां होइगा बासा ॥३३

भावार्थ—हे गुरु ! सृष्टि के आरम्भ अन्त में नाद तथा शब्दाकाश, बिन्दु तथा वीर्य प्रजनन शक्ति नहीं थी । शून्याकाश का आशाद्वार और नाद बिंदु दोनों के अभाव में प्राणवायु का निवास कहां होगा ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू नादे भी नादिवा बिदवी,

बिदवा गगने दिलाईबा आशा ।

नाद बिन्द दोऊ न होईगा,

तब प्राण पुरुष का विरंतरि होईगा बासा ॥३६

भावार्थ—हे अवधू ! शब्द, शब्दाकाश, बिन्दु-प्रजनन शक्ति शून्याकाश-आशाद्वार (नाद बिंदु) रहित सृष्टि में अणु-परमाणुवाद सिद्धांतानुसार प्राण चैतन्य शक्ति का महाकाश भूम में निवास होगा ।

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ! आकार छूटसी निराकार होवसी,
पवन न होसो पाणी ।

चंद सूर दोऊ नहीं होसी,
तब हँस की कौण निशाणी ॥३५

भावार्थ—हे गुरु ! देहाध्यास सृष्ट्याकार प्रलय होते समय वायु जल चन्द्र, सूर्यादि, पांचों तत्व नहीं रहेंगे तब जीवात्मा का निवास कहाँ होगा ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज हँस का खेल भणीजे,
शुन्य हँस का वासा ।

सहज ही आकार निराकार होसी,
परम ज्योति हँस का निवासा ॥३६

भावार्थ—हे शिष्य ! साकार सृष्टि देह जीवात्मा की लीला वपु ख्याल है, जब यह आकार विलय हो जाएगा तब स्थूल-सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व की स्थिति वत शून्याकार परम चैतन्य प्रभा स्वरूप जीवात्मा रहेगा ।

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ! अमूल का कौणो मूल, कहाँ का बास ।
ता पद का गुरु कौण है पूछत यति गोरखनाथ ॥३७

भावार्थ—हे गुरु ! जो सृष्टि स्वरूप वृक्ष अमूल (बिना गौड, जड़ के) है तो पद का गुरुत्व निवास कोण है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अमूल का शुन मूल है, मूल निरन्तर वास ।

ता पद का निरवाण गुरु, कथत मच्छन्द्रनाथ ॥३८

भावार्थ—हे शिष्य ! अस्थिर सृष्टि का मूल तत्व पिता आकाश है, जिसका निवास अर्द्ध बिंदु तुरियगा में है । तिस का गुरुत्व माया उपाधि रहित कल्याण स्वरूप है ।

गोरख उवाच (२०)

स्वामीजी ! कहाँ ते उत्पत्ति प्राण, कहाँ उत्पत्ति ते मन ।

कहाँ उत्पत्ति ते वाचा, कहाँ वाचा विलीयते ॥३९

भावार्थ—हे गुरु ! प्राण उत्पत्ति कहाँ से हुआ । मन की और वाणी की उत्पत्ति कहाँ से होकर वाणी का विलय कहाँ हो जाता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अवगति ते उत्पन्न प्राण, प्राण उत्पत्ति ते मन ।

मन उत्पत्ति ते वाचा, वाचा मन विलीयते ॥४०

भावार्थ—हे प्रश्नी ! आकाश की स्फन्द गति से वायु (प्राण) प्राण से मन क्रमशः वाणी का उद्भव हुआ और वाणी का मन में विलय हो जाता है ।

गोरख उवाच (२१)

स्वामीजी ! कौण सरोवर सनाल,

कोण मुखी बंछिवा जम का जाल ।

लोक अगोचर कासों लहै,

मन पवना कैसे सम रहे ॥४१

भावार्थ—हे गुरु ! जो स्थिर तालाब बहता रहे वह कौण है ? किस मुख से यम-जाल (भवचक्र) से मुक्ति होय ? प्राण चैतन्य-पद (मुक्ति कैसे प्राप्त करे) और मन-पवन की संयमता कैसे रह सकती है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन सरोवर अंगुल बारा बहे,
 रोज करे जप थिरता गहे ।
 सहजे लोक अगोचर लहे,
 मन पवना ऐसे सम रहे ॥४२

भावार्थ—हे शिष्य ! मन स्वरूप तालाब बारह अंगुल स्वरोदय चन्द्र स्वर में बहता रहता है और एकांत मनन (जप-स्मरण) करने से स्थिर (सुषमना) भाव रहता है । साधना से प्राणी मुक्ति प्राप्त करता है और ऐसे ही मन पवन एकता (संयम) रहता है ।

गोरख उवाच (२२)

स्वामीजी ! कौण सविषमी करै संधि,
 कौण चक्र लागे बंध ।
 कौण चेतन उनमुनि रहे,
 सतगुरु होय सो पूछ्यां कहे ॥४३

भावार्थ—कठिनाई पूर्व स्थल-भूमि कौण हैं ? और किस बंध से चक्र सिद्ध होती है ? कौण चेतन है जो उनमुन में रहता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अन विमली विषमी बंध चौकी ऊपर लागे बंध ।
सदा चेतन उनमुन रहे, ऐसा विचार मच्छन्द्रर कहे ॥४४

भावार्थ—हे शिष्य ! मल, विपेक्ष सहित दुःसाध्य भूमि हो तो योग में कठिनाई है । नाभी के उडियान बंध से सिद्ध मूर्त तथा साक्षी चेतन ही उनमुनि में रहता है ।

गोरख उवाच (२३)

स्वामीजी ! कहां ते उत्पना व्यापक कहां,
आदि का स्तुति समाई ।

ए तत गोसाईं कहो समझाई,
जहां हमारी उत्पत्ति रहाई ॥४५

भावार्थ—हे गुरु ! जीवात्मा कहां से उत्पन्न हुआ, कहां विलीन होगा अर्थात् व्यापक कहां है और समा कहां जायेगा । इस तत को समझा कर आदि, मध्य, अंत जनक स्थिति में हमारी उत्पत्ति को कहो ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! तिल मध्ये यथा तेल, काष्ठ मध्ये हुतासन ।
पहुप मध्ये यथा बास, यूं देही में देवता ॥४६

भावार्थ—हे शिष्य, जीवात्मा का व्याप्य-भाव सदैव इस शरीर में तिलों में तेल, लकड़ी में सामान्य अग्नि, फूल में सुगंधी की भांति सामान्य चैतन्य अवस्था से रहती है । जीवात्मा अनादि, सत्य, अविनाशी है ।

गोरख उवाच (२४)

स्वामीजी ! श्रपणी कहौ कै कौणो भाई,

बंक नाल है कौणो ठाई ।

जब यह प्राणि निशि करे,

पिंड मध्ये प्राण पुरुष कहां रहे ॥४७

भावार्थ—हे गुरु ! योग वृत्ति में दुःसाध्य सर्पणी (नागिन) क्या है, कहां निवास है, बंकनाल का स्थान कहां है ? प्राणी जब विश्राम काले निद्रा मध्य निशि करे तब शरीर में प्राण-चैतन्य का निवास कहां रहता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू श्रपणी कहो के सहज सुभाई,

बंक नाल है नाभि ठाई ।

जब यह प्राण निशि करे,

पिंड मधि प्राण पुरुष अपरछंद रहे ॥४८

भावार्थ—हे शिष्य ! साधना स्थल में एक नागनी नामक गोलाकार नाड़ी है, जिसका मुख सदैव ऊपर रहता है, जिसे पश्चिमोत्थान नामक आसन द्वारा जाग्रत कर निम्नोन्मुख कर के योगी अमृत पान करते हैं । बंकनाल दो प्रकार की है जिसमें नाभि स्थान मुक्त बंक है । जब प्राणी विश्राम करे तब शरीर में शक्ति स्वच्छन्द व्यापक रहती है ।

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी ! कौण चक्र में दिन करि चंद,

कौण चक्र में लागे बंध ।

कौण चक्र में पवन निरोधे,

कौण चक्र में मन परमौधे ।

कौण चक्र में धारे ध्यान,

कौण चक्र में लीजे विश्राम ॥४६

भावार्थ—हे गुरु ! प्रकाशमय ज्योति की प्राप्ति चन्द्र किस चक्र में करता है ? किस चक्र के बंध से अमृत प्राप्ति होती है ? किस चक्र साधन से प्राण-वायु वशीकरण (स्थिर) होती है और मन की शिक्षा किस चक्र साधन से प्राप्त होती है । किस चक्र में ध्यान करना तथा किस चक्र साधन से चित विश्राम होता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अर्ध चक्र में दिनकरि चंद,

ऊर्ध्व चक्र में लागे बंध ।

नाभी चक्र में पवन निरोधे,

हिरदा चक्र में मन परमौधे ।

काष्ठ चक्र में धारे ध्यान,

ज्ञान चक्र में लीजे विश्राम ॥५०

भावार्थ—हे शिष्य ! मूलाधार से नाभी-प्रमाण चक्र सिद्धि से चन्द्र-स्वर सिद्ध होकर ज्ञान प्रकाश करता है । जालन्धर बंध लगाकर अमृत प्राप्त करना और नाभि स्थाने स्वाधिष्ठान सिद्धि से प्राण-वायु का निरोध करना, हृदय स्थाने अनाहत चक्र में मन को आध्यात्म शिक्षा मिलती है । कण्ठ स्थाने विशुद्ध चक्र में जीवात्मा “सोहं” ध्वनि का ध्यान और ज्ञान चक्र (आज्ञा) में ज्योति दर्शनोपरांत ब्रह्म रन्ध्र में विश्राम की प्राप्ति होती है ।

गोरख उवाच (२६)

स्वामीजी ! कौण उदै माया शुनि,
नवग्रह कैसे पाप सु पुनि ।

कौण ग्रह ले उनमुनि रहै,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥५१॥

भावार्थ—हे गुरु ! माया की हृद किस शून्य तक है ?
नवग्रहों से पाप-पुण्य की प्राप्ति कैसे होती है ? किस ग्रह (देव)
को लेकर उनमुन (ध्येय-मग्न) रहें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! बोलत जैसे माया शुनि,
नवग्रह विचारे तो पाप न पुनि ।

शिव शक्ति ले उनमुनि रहे,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥५२॥

भावार्थ—हे योगी ! वाणी शून्य तक माया की हृद है ।
विचार द्वारा साधना करने से नवग्रह का पाप और पुण्य द्वंद
विलय होता है जैसे—

रवि, मंगल, शनि प्रवर्तक पिङ्गला नाड़ी, सूर्य स्वर
समोगुण रुद्र ध्यान में कर्मों का विलय । सोम, बुध-स्वरूप
इडा नाड़ी चंद्र स्वर रजोगुण प्रधान ब्रह्मा-विधान स्थापन
शांति साधन । गुरु, शुक्र प्रणव सुषुमना सम स्वर सतोगुण
विष्णु प्रधान सात्त्विक स्थापना धारणा मय ध्यान से नवग्रह
जनित पाप-पुण्य द्वैष-ताप निवृत्ति होती है । शिव-शक्ति

(सुरता-पवन) के मानस संगम को लेकर मुर्दा स्थाने उनमुन (समाधिस्थ) ध्यान में रहे ।

गोरख उवाच (२७)

स्वामीजी ! कौणो घर कौणो बास,
कोणो गर्भ रह्या दश मास ।
कौण मुखि पाणी कौण मुखिता खोर,
कौण दिशा उत्पत्ति भया शरीर ॥५३

भावार्थ—हे गुरु ! किस घर में किस का निवास है ? गर्भवास में दश माह कौण रहा ? किस मुख से पाणी भी खोर (दूध) के स्वाद में हो जाए तथा किस दिशा में शरीर की उत्पत्ति हुई है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अनिलु आत्म बास,
आया गर्भ रह्या दश मास ।
नाभि कंवल मुखि पाणी खोर,
वायुकार शनतपत्ति भया शरीर ॥५४

भावार्थ—हे योगी ! अग्नि भवन स्थूल पिण्ड आत्मा ने निवास किया, कहां अपने अहता ममता करि संसार चक्र में जन्म मरण पाकर वासना से गर्भवास में आया । नाभी स्थाने नागनि मुख पलटने से मूर्द्धा-द्रवित जल ही दूध अमृत स्वरूप प्राप्त होता है । प्राण-वायु के स्तम्भ बंध से स्थूल शरीर की स्थिति है ।

स्वामीजी कौणनाली होय शिवसंचरचा, कौण मुख पेंठा जीव
कौण गर्भ वसंतडा, कौण नाली रस पीव ॥५५॥

भावार्थ—गोरखनाथजी मच्छन्द्रनाथजी से पूछते हैं कि हे गुरु ! किस नाड़ी से कल्याण (शिव) तत्त्व की प्राप्ति होती है किस द्वार से जीवात्मा की स्थिति-वृत्त होती है। गर्भवास में किसने निवास लिया और किस द्वार से गर्भस्थ शिशु रस पीता है।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू! संखणी नाली होय शिव संचरचा, सुषुमणि पेंठा जीव।
माया गर्भ वसंतडा, बंकनाल रस पीव ॥५६॥

भावार्थ—हे शिष्य ! कनपटी स्थाने दश नाड़ियों में से संखणी नाड़ी द्वारा कल्याण (समाधि तत्त्व) की प्राप्ति होती है, सुषुमना नाड़ी से जीव ने शरीर में प्रवेश लिया और मेरी तेरी ममत्व वृत्ति रूप मायाध्यास ने गर्भ में निवास लिया। युक्त त्रिवेणी सनाल मुक्त बंकनाल द्वारा पोषण रस पीता है।

गोरख उवाच (२६)

स्वामीजी कौण शून्य उत्पन्ना आई,
कौण शुनि सतगुरु सु बुझाई ।
कौण शुनि में रह्या समाय,
ए तत गुरु कहो समझाय ॥५७॥

भावार्थ—हे गुरु ! किस शून्य में उत्पत्ति हुई ? किस शून्य

का ज्ञान सतगुरु ने समझाया ? किस शून्य में उलट कर
समाया ? इस तत्व को समझा कर कहो

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज उत्पन्न आई,

समि सुरत सतगुरु सु बुझाई ।

अतीत शुनि में रह्या समाय;

परम तत कहूँ समझाय ॥५८

भावार्थ — हे शिष्य ! स्वाभाविक क्रिया शून्य से कर्म क्षेत्र
से उत्पत्ति, समता शून्य वृत्ति का दृढ़ात्म ज्ञान सतगुरु ने समझाया
पंचभूतात्मा का साक्ष्य महाशून्य में परिवर्तन समाय रहे, यही परम
तत्व समझाकर कहता हूँ ।

गोरख उवाच (३०)

स्वामीजी ! कौण मुख लागे समाधि,

कोण मुख छूटे उपाधि ।

कोण मुख जु तुरिया बंध,

कौण मुख अजरावर कंध ॥५९

भावार्थ — हे गुरु ! किस वस्तु के अन्तर्हित होने से समाधि
लगती है ? किस अन्तरहित से प्रपञ्चोपाधि से निवृत्ति होती है ?
किस अन्तर्हित से साक्षी तुरीय बंध की सिद्धि होती है ? किस
अन्तर्हित से अजर-अमृत बिन्दू की प्राप्ति होती है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन सुखी वाला लागे समाधि,

पवन मुख बाला छूटे उपाधि ।

सुरति मुख बाला तुरिया बंध,

गुरु मुख बाला अजरावर कंध ॥६०

भावार्थ—हे शिष्य ! मन के अतति होने से समाधि लगती है, प्राण-वायु के अन्तर्हित होने में प्रापंचिक माया उपाधि से निवृत्ति होती है। अंतस्थ श्रवणेन्द्रिय वृत्ति सुरति के अंतरमुख होने से साक्ष्य-तुरीय बंध की सिद्धि तथा गुरुशब्द के अन्तर्हित साधन से अजर-अमृत स्वादु की प्राप्ति होती है।

गोरख उवाच (३१)

स्वामीजी ! कौण सोवे कौण जागे, कौण दशूँ दिश धावे ।

कहां ते उठत पवना, कवन कंठ तालिका बजावे ॥६१

भावार्थ—हे गुरु ! इस शरीर में अष्ट पहरी कौन जागे, कौन सोचता है। कौन दशों दिशा में दौड़ता है ? प्राण-वायु कहां से ऊर्ध्वगामी होता है, और कण्ठ तालिका की ध्वनिक नाड़ियों को कौन बजाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन सोवे पवन जागे, कल्याण दशूँ दिशि धावे ।

नामि ते उठत पवना, हौठ कण्ठ तालिका बजावे ॥६२

भावार्थ—हे शिष्य ! सुषुप्तावस्था में मन ही अंतर्मुख संकल्प-विकल्प रहित होता है मानो सोता है। प्राण-वायु ही तीनों अवस्थाओं में जाग्रत रहता है। अंतस्थ कल्पना ही जाग्रत विश्व जीव चक्षु स्थानों होकर तथा स्वप्नावस्था में तैजस नामक जीव कण्ठस्थनो हिता नाम सूक्ष्म रोमसहस्राणु भाग में दौड़ती है। पवन नाभी से ऊर्ध्वगामी

होकर चलता है । भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त से कण्ठ गत ध्वनि-तंत्रियों को होंठ ही चलने की यान्त्रिक गति प्रदान करता है ।

गोरख उवाच (३२)

स्वामोजी ! कहां ते करे मन गुण घणा,
कहां ते मन करे आवागवणा ।
कौण मुख चांदना कर करै,
का मुख काल निद्रा करे ॥६३

भावार्थ—हे गुरु ! साधन को मन की स्थिति कहां पर रहने से बहुगुण करें ? मन का आवागमन कहां से होता है ? किस अंतर्हित से ज्योति स्वर चन्द्र का उदय होता है और किस अन्तर्हित काल की सुषुप्तावस्था होती है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! हृदय ते करे मन गुण घणा,
नाभी ते पवन करे आवा गवणा ।
आय मुख चांदना कर करै,
मन मुख काल निद्रा करे ॥६४

भावार्थ—हे शिष्य ! अनाहत चक्र हृदय स्थान की साधना से मन वश होकर साधक का हित करता है । नाभी से प्राण ऊर्ध्व गामी पुनः अपने अर्ध स्थान को प्राप्त करता है । अन्तर्हित चंद्र स्वर अपने श्रम साध्य कसौटी से सुखानन्द तथा मन अंतर्मुख निश्चय से काल का दमन होता है ।

गोरख उवाच (३३)

स्वामीजी ! कौन ज्योति ते पवना पलटे,
 कौन शून्य ते वाचा फुरे ।
 कौन शून्य ते त्रिभुवन सार,
 कौन शुनि ते उतरिया पार ॥६५

भावार्थ—किस शून्य की ज्योति दर्शन कर पवन-प्राण पलटे ? किस शून्य से वाणी का संस्फुर होता है ? किस शून्य से तीनों लोकों का सार तत्व उद्बोधन होता है ? किस शून्य से पार उतरना है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! उग्र शून्य ते ज्योति पलटे,
 अभय शून्य ते वाचा फुरे ।
 परम शून्य ते त्रिभुवन सार,
 अतीत शून्य उतरिया पार ॥६६

भावार्थ—हे शिष्य ! उग्र शून्य से ज्योति पलट कर त्रिकुटी में साधक को दर्शन होते हैं, अभय शून्य से वाणी का उपादान कारण बनता है, परम शून्य ही तीनों लोकों का आवास उत्पत्ति द्वार है, अतीत शून्य (भयावह-दृश्य) से पार उभरना है ।

गोरख उवाच (३४)

स्वामी ! कहां ते उत्पत्ती बुध्या, कहां ते उत्पत्ता ग्रहार ।
 कहां ते उत्पत्ती विद्रा, कहां ते उत्पत्ता काल ॥६७

भावार्थ—हे गुरु ! बुद्धि का जन्म कहां से, भोजनवृत्ति (क्षुधा तृप्ति) युक्ति का जन्म कहां से हुआ ? शय्याकाले निद्रा का जन्म कहां से होता है और काल (मृत्यु यम) का जन्म कहां से होता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मनसा ते उत्पन्नी बुध्या, बुध्या ते उत्पन्ना अहार ।
अहार ते उत्पन्नी निद्रा, निद्रा ते उत्पन्ना काल ॥६८

भावार्थ—हे साधक ! मन को विवेक वृत्ति से बुद्धि का, बुद्धि की आवश्यकता पूर्ति बुद्धि पूर्ण खोज से आविष्कृत भोजन (क्षुधा निवृत्ति) का जन्म हुआ । भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चौष्यादि चतुर्विध भोजन से निद्रा (स्वप्न-सुषुप्ति) अवस्था की उत्पत्ति और निद्रालस्य से काल (मृत्यु जनक प्रवृत्ति) का जन्म होता है ।

गोरख उवाच (३५)

स्वामीजी । दिव्य दृष्टि किम होइबा, किम होईबा ज्ञान विज्ञान
गुरु शिष्य काया कै रहे, किसा उतरबा पार ॥६९

भावार्थ—हे गुरु ! देवदृष्टि कैसे प्राप्त होती है ? परमेश्वर का विज्ञान-ज्ञान कैसे प्राप्त होता है और गुरु-शिष्य के शरीर कितने रूप में रहे ? भव-सागर से पार कैसे उतरना होता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! दृष्टि ते दिव्य दृष्टि होइबा,
ज्ञान ते होय विज्ञान ।

गुरु-शिष्य की एको काया,

पार चाहौ तो बहोर न जाया ॥७०

भावार्थ—हे शिष्य ! त्राटक दृष्टिभेदन की साधना से दूर-दर्शिता या पारदर्शिता की दिव्य दृष्टि होती है, अभ्यात्म ज्ञान से ईश-विज्ञान तथा भौतिक विज्ञान का बोध होता है, गुरु और शिष्य का भौतिक शरीर दो है किन्तु शब्द-आत्मा एक है और भव सिंधु पार होने की बहुरि जन्ममूल अज्ञात मूल वासना को करना चाहिये ।

गोरख उवाच (३६)

स्वामीजी ! कहां ते उठत श्वास उश्वास,

कहां परम हंस का वास ।

कैसे मनवा निश्चल रहे,

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥७१

भावार्थ—हे गुरु ! स्वासोश्वास कहां से उठता है ? जीवात्मा का निवास कहां है ? मन स्थिर कैसे होता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अरध ते ऊठत श्वास उश्वास,

ऊरधे परम हंस का वास ।

सहज स्थान मनवा निश्चल रहै,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥७२

भावार्थ—हे साधक ! नाभी स्थान से श्वास उठता है, दशवें द्वार ब्रह्मरंध्र से जीवात्मा का आवास है । साधना से मन स्थित-एकान्त रहता है ।

गोरख उवाच (३७)

स्वामीजी ! कैसे आवे कैसे जाय,

कैसे जोया रहे समाय ।

कैसे तन मन सदा थिर रहे,

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥७३॥

भावार्थ - प्राणात्मा शरीर में कैसे आता है, कैसे जाता है ? शरीर निधन पर जीव कहां समा जाता है ? मन तथा सूक्ष्म शरीर सामग्री कहां स्थिर रहती है ? गोरखनाथजी अपने गुरु से प्रश्न करते हैं ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अशू ! शून्य आवे शून्य ही जाय,

शून हो जोया रहे समाय ।

सहज शून तन मन सदा थिर रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥७४॥

भावार्थ—हे साधु ! अणु परमाणु शून्य ही आती जाती हैं और तत्त्व-अंश सामग्री सुक्ष्माणु शून में ही समानती है । साधना काल कर्मयोग में तन मन स्थिर आयु तथा प्राणान्ते भौतिक प्राकृतिक मर्यादा को स्वाभाविक स्थिति में रहती है ।

गोरख उवाच (३८)

स्वामीजी ! कहां नसे शक्ति कहां बसे शोच

कहां बसे प्राण, कहां बसे जीव ।

कहां होई इनका परचा लहै,

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥६५॥

भावार्थ—हे भगवान ! प्राकृतिक भूगोल खगोल में तथा शरीर में प्रकृति-शक्ति, जीवात्मा-शंकर का कहां निवास है ? प्राण और जीव कहां रहते हैं ? इन सबका संयोग कहां पर, कैसे होता है ? यह समझाकर कहिये ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! अरध बसे शक्ति ऊरध बसे शीव,

भीतर बसे प्राण अंतरिक्ष बसे जीव ।

निरन्तर होय इनका परचा लहै,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥७६॥

भावार्थ—पृथ्वी-नाभी तल पर प्रकृति-शक्ति बसती है ? ऊपर गगन-अम्बर में कल्याण तत्व का वास है ? ब्रह्माण्ड-पिंड क्रिया चालक प्राण भीतर रहता है और जो शून्य-मण्डल में रहे वही जीव है । प्रलय-काल अथवा साधना-काल में इनका संयोग होता है ।

गोरख उवाच (३६)

स्वामीजी ! कैसे बैठे कैसे चाले,

कैसे बोले कैसे मिले ।

कोण सुरत में निर्भय रहे ।

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥७७॥

भावार्थ—हे गुरु ! साधक को साधना पथ में उठना, बैठना

और बोलना, मिलना, चलना तथा निर्भय कैसे रहना चाहिये ।

श्री मच्छद्र उवाच

अवधू ! सुरत मुख बंटे सुरत मुख चाले,
सुरत मुख बोले सुरत मुख मिले ।
निरति सुरति में निर्भय रहें,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥७८

भावार्थ—हे शिष्य ! साधक को पथ में महान सावधानी से सदैव साधनोन्मुख तत्पर रहना, चलना, उठना, मिलना, बैठना आदि क्रिया करते हुए पूर्णतः-अन्तर्मुखी निर्भयता में रहना चाहिये ।

गोरख उवाच (४०)

स्वामीजी ! कोण है शब्द कोण है सुरति,
कोण से बंध्यो काया से निरति ।
ई बंध्या मिटो कैसे रहै,
सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥७९

भावार्थ—हे गुरु ! शब्द कौन है, सुरति क्या है ? शरीर के बंध क्या है ? और यह बंधन कैसे मिटे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द अनाहद सुरति सुरति,
निरति निरालंब लागे बंध ।

कूडध्या मिटे सहज में रहे,

ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥८०॥

भावार्थ—हे शिष्य, शब्द सोमा-आकार रहित है, श्रेष्ठ साधन प्रवृत्ति मुमुक्षु-वृत्ति ही सुरति है। अन्तर्मुख वृत्ति आशा ही शरीर और जीव का जड़-चेतन बंध है। बहिरङ्ग विषय भोगिणी इच्छाओं आशाओं को बांध कर मांघना साधना में लगा रहे तो जीव के बंध निवृत्त होकर मुक्त स्वरूप स्थित रहे।

गोरख उवाच (४१)

स्वामीजी ! कौण सु आसन कौण सुजान

किहि विधि बाला धारे ध्यान

कैसे अवगति का सुख लहे

सतगुरु होय सो बूझचा कहै ॥८१॥

भावार्थ—हे गुरु ! किस आसन से कैसा ज्ञान ले, साधक किस प्रकार ध्यान धरे। परमानन्द की प्राप्ति कैसे होय ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! संतोष सु आसन सुविचार सुजान

काया करि धरिबा ध्यान

गुरु सुख अवगति का सुख लहै;

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥८२॥

भावार्थ—हे साधक ! संतोष का आसन, विशेष-ज्ञान, शरीर से आसन। प्रत्याहारादि साधना सहित ध्यान करे और गुरु उपदेश निष्ठ स परमानन्द की प्राप्ति होती है।

गोरख उवाच (४२)

स्वामीजी ! कौण संतोष को कौण विचार;

कौण सु ध्यान काया के पार ।

कैसे मनवा इनमें रहे;

सतगुरु होय सो ब्रूझ्यां कहे ॥८३

भावार्थ — हे गुरु ! संतोष कैसा विचार कैसा ? शरीर से पार ध्यान कैसा ? इनमें मन कैसे रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! निरभे संतोष अनुभे विचार;

दशो में ध्यान काया के पार ।

गुरु मुख मनत्रा इनमें रहे;

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥८४

भावार्थ — हे शिष्य ! निर्भय संतोष, अनुभव विचार और ब्रह्मरन्ध्र (दशवै) द्वार का ध्यान काया के पार का है । गुरुमुखी सुगरा शिष्य मन इन में अन्तर्हित रहता है ।

गोरख उवाच (४३)

स्वामीजी ! कौण पांव बिन मारग;

कौण चक्षु बिन दृष्टि ।

कौण कर्ण बिन श्रवण;

कौण मुखः बिन शब्द ॥८५

कौन है ? जैसे—पांव बिना मार्ग, नेत्र बिना दृष्टि, कानों के बिना सुनना और मुख के बिना बोलना ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! विचार पांव बिन मारग, निरति चक्षु बिन दृष्टि ।
सुरति करण बिन श्रवण लौ मुख बिन शब्द ॥८६॥

भावार्थ—हे शिष्य ! विचार मार्ग पांव बिना है, अन्तस्थ ज्योति चक्षु बिना है । अंतर्नाद-मध्ये गुंज सुनने की क्रिया कानों बिना है । अन्तःकरण को ली ही बिना मुख के शब्द है ।

गोरख उवाच (४४)

स्वामीजी ! कौण धौवता कौण आचार,
कौण जाप मन तजे विकार ।
कौण भाव में निरभय रहे,

सतगुरु होय सौ पूछ्यां कहै ॥८७॥

भावार्थ—हे गुरु ! अंतस्थ मल को कौन धोता है ? आचार कौण है ? किस जप से मन की शुद्धि होती है ? किस भाव से निर्भय रहे ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ध्यान धौवता विचार आचार,
अजपा जाप मन तजे विकार ।
अनुभव भाव में निरभय रहै,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥८८॥

भावार्थ—हे शिष्य ! मन विक्षेपादि अंतस्थ दोषों को निरावरण कर्त्ता ध्यान है, विचार ही उत्तम आचार-संहिता है ।

मानस (सुरति स्वाहा एवं मन से एकीकरण से किया गया) जप ही मन को शुद्ध करता है। अनुभव स्थिति में निर्भय रहना चाहिये।

गोरख उवाच (४५)

स्वामीजी ! कौण स वोऊं कौण स आप,
कौण स माई कौण स बाप ।
कैसे मन में दरिया रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥८६

भावार्थ—हे गुरु ! ओ३म्कार कौन है ? आप कौन हैं, माता कौन हैं ? पिता कौन है ? मन में सदैव शीतलता समुद्र सम्पूर्ण भरा कब रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द वोऊं ज्योति स आप,
शून्य स माई चेतन बाप ।
निश्चल मन में दरिया रहे,

ऐस विचार मच्छन्द्र कहै ॥८७

भावार्थ—हे अवधू ! शब्द ही ओ३म् है, ज्योति स्वयं अपना स्वरूप है। शून्य मय प्रकृति को सब ही माता है, चेतन सत्ता ही पिता है। मन का ध्येयाकार निश्चय बनने से शीतल-सिंधु पूर्ण रहता है।

गोरख उवाच (४६)

स्वामीजी ! कौण छे चेतन कौण छे सार,
कौण छे उत्पत्ति कौण छे काल ।

कोण महि पंच तंत जरि रहे;

सतगुरु होय सो पूछ्यां कहै ॥६१॥

भावार्थ—हे गुरु ! चेतन कौन है ? सार तत्व क्या है ? उत्पत्ति क्या है ? काल (विनाश) क्या है ? पंच तंत किस में विलय होकर रहते हैं ?

श्री मच्छेन्द्र उवाच

अवधू, ज्योति छै चेतन निर्भय सार,

जागिवा उत्पत्ति निद्रा काल ।

ज्योति में पंच तंत जरि रहै,

ऐसा विचार मच्छेन्द्र कहै ॥६२॥

भावार्थ—हे योगी ! ज्योति चेतन है, निर्भय तत्व सार है । जाग्रत काल उत्पत्ति है, निद्रा-सुप्त काल ही मृत्यु (विनाश) है । ज्योति (चेतन) में पांचों तंतों का विलय होता है ।

गोरख उवाच (४७)

स्वामी, कोण बोले कोण सोवे,

कोण रूप में आपा जुग जोवे ।

कोण रूप में जुग रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥६३॥

भावार्थ—हे गुरु ! सोता कौन ? जागता कौन ? अपना स्वरूप कहां देखे ! किस स्वरूप में युगान्तर-काल तक अटल रहे ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द बोले शक्ति सोवे,
अदेख रूप में आपा जोवे ।

अरूप रूप में जुग जुग रहे,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहे ॥६४

भावार्थ—हे साधु ! शब्द जाग्रत है, शक्ति सुप्त है, अदृष्ट अमुष्ट स्वरूप में आपको ज्ञान मार्ग से समदृष्ट से देखें और अटल, रूप वर्ण रहित युगान्तर काल तक स्थिर रहता है ।

गोरख उवाच (४८)

स्वामीजी ! कौण मुख रहणा कौण मुख ध्यान ?
कौण मुख अभिरस कौण मुख पान ?
कौण मुख छेदी देही रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥६५

भावार्थ—हे भगवान् ! किसके सन्मुख रहना, किसके सन्मुख ध्यान, अमृत, प्राप्ति, पीना तथा किस सन्मुखता को छेदने से शरीर रहे सो कहिये ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज मुख रहना, भक्ति मुख ध्यान
गुरु मुख अमोरस चित्त मुख पान ।

आशा मुख छेदिवा देहि रहे,
ऐसा विचार मच्छंदर कहे ॥६६

भावार्थ—हे शिष्य ! साधना के सन्मुख रहणा, भक्ति (उपासना) के सन्मुख रहकर ध्यान करना । गुरु के सन्मुख से ज्ञान अमृत चेतन (सावधान) सन्मुख रहकर पीना और आशा मुख के दर्शन करके अमर रहिये ।

गोरख उवाच (४६)

स्वामीजी ! कौण मुख आवे, कौण मुख जाय,

कौण मुख होय काल को खाय ।

कौण मुख होय जाति में रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहे ॥६७

भावार्थ—हे गुरु ! किसके सम्मुख आवे, जावे और काल को खावे, ज्योति में समाया रहे ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सहज मुख होय आवे,

सहज मुख होय सो जाय,

निरपक्ष होय काल कूं खाय ।

निरास मुख होय ज्योति रहे;

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥६८

भावार्थ—हे साधु ! साधना सन्मुख आवे जावे बहिरंग क्रिया तथा प्राणायाम क्रिया भेद में साधन सन्मुख निरपक्ष होकर मृत्यु का अपघन करे और निराशा सन्मुख होय ज्योती (चेतन) में समाया रहे ।

गोरख उवाच (५०)

स्वामीजी ! कौण है काया कौण है प्राण,
कौण पुरुष का धरिए ध्यान ।

कौण स्थान मन काल सूं दूरि रहे,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥६६

भावार्थ—हे गुरु ! वस्तुतः शरीर कौन है ? प्राण कौन है ? किस पुरुष का ध्यान करना चाहिये ? किस स्थान पर मन मृत्यु भय से दूर रहता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! मन है काया पवन है प्राण,
परम पुरुष का धरिए ध्यान ।

सहज स्थान मन काल सूं दूरि रहे,
ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥१००

भावार्थ—हे शिष्य ! मनोमय सृष्टि साधक के प्रयाण में मन ही शरीर हैं और प्राण पवन है, परमात्मा का ध्यान करना चाहिये । साधन स्थान स्थिति मन मृत्यु-अवधान से दूर रहता है ।

गोरख उवाच (५१)

स्वामीजी ! कौण है कूंची कौण है ताला,
कौण है बूढ़ा कौण है बाला ।

कौण स्थान मन उनमुनि रहै,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१०१

भावार्थ—हे गुरु ! ताला, कूंची कौन है ? कौन बूढ़ा कौन बालक है ? किस स्थान पर मन ध्येयाकार आनन्दमय रहता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शब्द ही कूंची शब्द ही ताला,

अचेतन बूढ़ा चेतन बाला ।

ज्ञान स्थान मन उनमुनि रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥१०२॥

भावार्थ—हे शिष्य ! शब्द मय बन्धन (ताला) को निवृत्ति शब्द वेद वाक्य ही चाबी है, जर है सोई वृद्ध है, चेतन ही बालक है । ज्ञान-भूमिकारूढ़ मन ही आनन्दमय रहता है ।

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी ! कौण समाधि कौण है सिद्ध,

कौण समाया कौण है रिद्ध ।

कैसे मन की भ्रांति नशाय,

सतगुरु श्याम कहो समभाय ॥१०३॥

भावार्थ—हे गुरु ! समाधि क्या है ? सिद्ध कौण है ? कौन समाया है ? कौन अक्षय रिद्ध है ? मन की भ्रांति कैसे निवृत्ति हो ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! सुरत समाधि शब्द सु सिद्ध,

आप समाया परा है रिद्ध ।

दशों के मेटे भ्रांति नशाय,

ऐसा वचन कहे गुरु राय ॥१०४

भावार्थ—मच्छन्द्रनाथ जी कहते हैं कि हे गोरख ! अन्तर्वृत्ति समाधि है, वेद-गुरु वाक्य शब्द स्वतः सिद्ध हैं। आप लय रूप है, वाणी रिद्धि स्वरूप है। पांच (कम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) बैरी तथा पांच क्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश) इन देशों के निवृत्ति से भ्रान्ति नामक संशय की निवृत्ति होती है।

गोरख उवाच (५३)

स्वामीजी ! कौण है सांचा कौण से रंग,

कौण आभूषण चढ़े सुरंग ।

तामें निश्चल कंसे रहै,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहै ॥१०५

भावार्थ—हे गुरु ! सांचा कौन है ? जिसमें ढलने वाला द्रव कौन है ? कैसा आभूषण है ? जिस पर सदैव रंग की कसीटी चढ़े ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ज्ञान है सांचा प्राण सुरंग,

ज्योति आभूषण चढ़े सुरंग ।

तामें निश्चल ऐसा रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहै ॥१०६

भावार्थ—हे अवधूत ! ज्ञान स्वरूप द्रवण (सांचे) में प्राण द्रव्य पदार्थ ढलता है तब साधक की त्राटक प्रोढ़ावस्था में

ज्योति के दर्शन होते हैं वही ज्योति अनमोल गहना है । जो कसौटी (परख) पर चढ़ने योग्य है उसमें निश्चय कर निश्चल होकर रहे ।

गोरख उवाच (५४)

स्वामीजी ! कौण है मन्दिर कौण है देव,
कहां बैठ करि कीजे सेव ।

कौण है पाती कैसे रहे,

सतगुरु सोई बूझ्यां कहे ॥१०७

भावार्थ—हे गुरु ! साधक के लिये कौनसा मंदिर है ?
कौनसा देव है ? कहां बैठकर सेवा करें, भेंट में क्या चढ़ावें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! देही मन्दिर चेतन देव,

मन सरोवर बैठ निरंतरि सेव ।

प्रेम पाती उनमुन रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥१०८

भावार्थ—हे साधक ! श्रेष्ठ मंदिर शरीर है, इसमें निवासी चैत्यन्यात्मा ही श्रेष्ठ देवता हैं, मनन तालाब के किनारे बैठकर उपासना करना चाहिये, प्रेम पुष्प-पत्ती चढ़ाकर आनन्द-मग्न रहना चाहिए ।

गोरख उवाच (५५)

स्वामीजी ! कौण है मन्दिर कौण है देव,

कौण है मूरति कौण अपार ।

कौण रूप में निर्भय रहै,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहे ॥१०६

भावार्थ—हे गुरु ! सिद्धावस्था में कौन मंदिर है ? कौन देवता ? कौन मूर्ति जो अपार है ? किसकी उपासना करके निरभय रहें ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! शुन है मंदिर शब्द है देव,

ज्योति है मूर्ति ज्वाला अपार ।

अरूप रूप में उनमुनि रहे,

ऐसा विचार मच्छन्द्र कहे ॥११०

भावार्थ—हे शिष्य ! सिद्धावस्था में शून्य ही विशाल मंदिर है, ओंकार शब्द ही धार्मिक देवता हैं । त्राटक साध्य ज्योति ही साक्षात् दृश्य मूर्ति तथा अपार तेजस्वी है, माया उपाधि का रूप स्थूल रहित आत्म में निर्भय रहना होता है ।

श्री मच्छन्द्र उवाच

स्वामीजी ! कौण है दीवा कौण प्रकाश,

कौण है बाती तेल निवास ।

कैसे दीवा इन में रहे,

सतगुरु होय सो बूझ्यां कहे ॥१११

भावार्थ—हे गुरु ! दीपक कौन है ? प्रकाश कैसा है ? बाती क्या है ? तेल क्या है ? इनके होते भी दीपक अटल कैसे रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! ज्ञान हैं दीव शब्द प्रकाश,
संतोष तेल प्रेम निवास ।

दुविधा मेखि अखण्डित रह,
ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥११२॥

भावार्थ—हे शिष्य ! ज्ञान दीपक का शाब्दिक प्रकाश, संतोष तेल में प्रेम की धारा बाती लगी रहे । दुविधा (द्वंद) को वायु से वंचित करके लौ को अखंडित रखें ।

गोरख उवाच (५७)

स्वामोजी ! कौण बैठा कोण चल्या,
कोण किरया कोन मिला ।

कोण घर में निरभय रहे,
सतगुरु होय सो बूझ्यां कहें ॥११३॥

भावार्थ—हे गुरु ! साधक अवस्था में क्या बैठा ? क्या चल्या ? क्या फिरचा, क्या मिला और घर में निर्भय रहे ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! बैठा धीरज चल्या विकार,
सुरति सु फिरचा जिल्या सु सार
सदा अतीत घट निर्भय रहै,

ऐसा विचार मच्छंद्र कहै ॥११४॥

भावार्थ—हे योगी ! धैर्य बैठा हैं, विकार चले गये अंतर्दृष्टि सुरति से चौदह लोकों के पिण्ड-ब्रह्माण्ड ज्ञान का विचार करना ही फिरना है जिस से तत्त्व ज्ञान रमभ मिली और सबसे एकांत (अतीत) होकर निर्भय रहना ।

गोरख उवाच (५८)

स्वामीजी ! कौण जोगी कैसे रहे,

कौण भोग कैसे लहै ।

सुख में कैसे उपजे पार,

सता में कौण बंधावे धार । ११५।

भावार्थ—हे गुरु ? वस्तुतः योगी कौन है ? कैसे रहता है ? कैसा भोग कैसे भोगता है ? कैसे सुख पाता है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू मन जोगी जो उनमुन रहे,

उपजे महारस शुब्द सु लहै ।

रस ही मांही अखण्डित पार,

सतगुरु शब्द बंधावे धार । ११६।

भावार्थ—हे शिष्य ! मन रूपी जोगी ध्येयस्त मौन में रहता है, मूर्द्धा ध्यान के महारस शब्द-अनहद बाजा सुनकर अखंडित आनन्द में रहता हैं, ऐसा परमानन्द साधन युक्ति द्वारा सतगुरु ही दरशाते हैं ।

गोरख उवाच (५९)

स्वामी ! कौण आत्मा आवे जाय,

कौण आत्मा शुन्य समाय ।

कौण आत्मा त्रिभुवन प्यार,

कौण का परचा बावन बार ॥११७॥

भावार्थ—हे गुरु ! आने जाने वाली आत्मा कौनसी है शुन्य-विभु में विलय होने वाली आत्मा कौनसी है ? तीनों लोकों का प्रेम रस लेने वाली कौनसी आत्मा है ? किस को शक्ति साधना बावन (अनेकों) बार प्रदर्शित होती है ?

श्री मच्छन्द्र उवाच

अवधू ! पवन आत्मा आवे जाय,

मन आत्मा शुन्य समाय ।

ज्ञान आत्मा त्रिभुवन प्यार,

गुरु का परचा बावन बार ॥११८॥

भावार्थ—हे शिष्य ! वायु में अंश प्राणात्मा आती जाती मनशील आत्मा शून्य में विलय हो जाती है । विशेष अध्याज्ञान आत्मा तीनों लोकों में व्यापक रस है । गुरु की महिमा-शही बारम्बार उद्यत रहती है ।

गोरख उवाच (६०)

स्वामीजी ? मन का कौण जीव,

जीव का कौण में बास ।

बे श्वास का कौण आधार,

कहो आधार का कौण रूप ॥११९॥

भावार्थ—हे गुरु ! मन का चैतन्य कौन है, उस जीव निवास कहाँ है ? उस निवास का आवास आधार क्या है ? उस आधार का स्वरूप क्या है ?

श्री मछन्द्र उवाच

अवधू ! मन का पवन जीव,
पवन का शुन्य में बास ।
शुन्य का ब्रह्म आधार है,
ब्रह्म का अचित रूप ॥१२०॥

भावार्थ—हे शिष्य ! मन का जीव (शक्ति) प्राण है, प्राण का शुन्याकाश में निवास है शुन्य का आधार ब्रह्म है ब्रह्म का स्वरूप अचिन्तनीय है ।

गोरख उवाच (६१)

स्वाभीजी ? कौण चक्र शिर के कंध,
कौण चक्र अगोचर बंध ।
कौण चक्र में हंस निरोधे ।
कौण चक्र में मन परमोधे ।
कौण चक्र में काल है सबाधि,
कौण चक्र में लगे समाधि ॥२२२॥

भावार्थ—हे गुरु ! किस चक्र की साधना से कुण्डलिनी-शक्ति की जागृति होती है ? किस चक्र से तीनों योगिक क्रिया बंध सिद्ध होती है ? किस चक्र में प्राण-हंस अवरुद्ध होती है ? किस चक्र में मन की शिक्षा मिलती है ? किस चक्र में काल गति रुकती है ? किस चक्र में समाधि की परिपक्व धारणा बनती है ?

श्री मछन्द्र उवाच

अवधू ? मूल चक्र थिरके कंध,
 गुणा चक्र अगोचर बंध ।
 मणि चक्र में हंस निरोधे,
 अनाहद चक्र में मन परमौधे ।२२२।
 मिशुद्ध चक्र में काल समाधि,
 चन्द्र चक्र में लगे सबाधि, ।
 ए षट् चक्र का जाणो भेव,
 सो आपहि करता आपहि देव ।२२३।
 पवन पवना साधते योगी,
 जरा पलटे काया हा निरोधी ।
 साधो अवधू योग कला,
 निश्चय साधे होये भला ।२२४।

भावार्थ—हे शिष्य ! मूलाधार चक्र से नागिन जाग्रत होती है मूलबन्ध से ही मूल, जालन्धर, उड़ियान बंध की सिद्धि होती है तथा मणिपुर चक्र से प्राण वायु वश होती है अनाहद चक्र से मन को शिक्षा, विशुद्ध चक्र में जराव्याधि मृत्यु भय निवारण होकर चन्द्र चक्र में समाधि धारण होती है । इन षट् चक्रों का भेद पहिचानने साधने वाला योगी अद्वैत निष्ठ मुक्तात्मा होता है शरीर के रहते आरोग्य, अवृद्ध सबल रहे ।

॥ इति गुरु-शिष्य शका समाधान समाप्त ॥

अथ गोरख दत्तात्रेय संवाद अंग गोरख उवाच [१]

स्वामीजी तुम ब्रह्मा कि ब्रह्मचारी,
तुम वान पुस्तक कि दण्डधारी ।
तुम जोगी कि जोग जुगता,
कौण प्रसादे रमो स्वच्छंद मुगता ॥१

भावार्थ—हे भगवान ! आप गृहस्थ हो या ब्रह्मचारी, ग्रंथ धारक वानप्रस्थ या सन्यासी कौन है ? सिद्ध योगी है ? अथवा साधना प्रवेशी साधक ? आप किसी की कृपा से मुक्त-स्वतन्त्र विचरण करते हो ?

श्री दत्त उवाच

अवधू ! न हम ब्रह्म न हम ब्रह्मचारी,
न हम वान पुस्तक ना दण्डधारी ।
हम जोगी न जोग जुगता,
आप प्रसादे रमो स्वच्छंद मुगता ॥२॥

भावार्थ—हे साधु ! ब्रह्मचर्य ग्रहस्थ, वानप्रस्थ सन्यास इन चारों आश्रमों से रहित सिद्धि सिद्ध, साधक भी नहीं । मैं स्वयं अपनी कृपा स्वतन्त्र मुक्त हूँ ।

गोरख उवाच [२]

स्वामीजी ! आपा भेटणा सतगुरु थापणा,
अण परचे जग लाया ।

गोरख कहै सुणो हो स्वामी,

तुम कौण पुरुष कहां से आया ॥३॥

भावार्थ - हे भगवान ! अहंकार रहित होकर सतगुरु शरण जाकर साधना करनी चाहिए । बिना साधना संसार नष्ट कर देगा । आप कौन है ? कहां से आए ?

श्री दत्त उवाच

अवधू ! हों हूं गुप्त गुप्त ते प्रकट,

रहता पुरुष की छाया ।

दत्त कहै सुणौ सत गोरख,

मैं गैब पुरुष गैब से आया ॥४॥

भावार्थ—हे साधू ! मैं गुप्त से गुप्त हूं प्रकट से प्रकट हूं । चैतन्य अनादि पुरुष की छाया (माया का प्रतीक) हूं और शुन्य पुरुष शुन्य से आया हूं ।

गोरख उवाच [३]

स्वामीजी ? अजर बिंदु अगाध बाई,

अप्रबल विप्लव की माया ।

गोरख कहै सुणो हो स्वामी,

क्यूं शांति जल बिंद की काया ॥५॥

भावार्थ—स्पष्ट हैं ।

श्री दत्तात्रेय उवाच

अवधू ! ! कड्यो न बाई अप्रबली न माया,

आकार न निराकार सुषमो न काया ।

जलो न जल बिबोऽयनो न भाया,
दत्तो न गोरखो न काया न छाया ॥६

वर्ण स्पष्ट है—

गोरख उवाच ४.

स्वामी कौण जु आवे कौण जु जाय,
जा बोले सो कहाँ समाय ।
जो गम होय सो कहाँ भेव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥७

श्री दत्त उवाच

अवध ! न कोई आवे न कोई जाय,
कांसा नाद मांहि समाय ।
एके सूत्र पोयो हार,
सांभल गोरख कहै विचार ॥८

गोरख उवाच ५.

स्वामीजो ! कौण है माता कौण पिता,
कौण गुरु उपदेश सिखाता ।
कौण सु आसन करऊ विश्राम,
सुण हो स्वामी आठों याम ॥९

श्री दत्त उवाच

अबधू ! धीरज मात संतोष पिता,
ज्ञान गुरु उपदेश सिखाता ।

अनिश आसण तहां विश्राम,
सांभल गोरख आठों याम ॥१०॥

गोरख उवाच ६.

स्वामीजी ! कौण है मुक्ता कौण हंस सहै,
कौण बिनसे कौन अजर रहै ।
जो गम होय सो कहिये भैव,
गोरख भाखे सुणो दत्तदेव ॥११॥

श्री दत्त उवाच

अवधू ! ब्रह्म मुक्ता प्रकृति सदृश सहै,
प्रकृति बिनसे ब्रह्मा अजर रहै ।
गुप्त ज्ञान कथि गम अपार,
सुनले गोरख कहं विचार ॥१२॥

गोरख उवाच ७.

स्वामीजी कौण है सूक्ष्म कौण है स्थूल,
कौण है डाला कौण है मूल ।
जो गम होय तो कहिये भैव,
गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥१३॥

श्री दत्त उवाच

अवधू ! ब्रह्म सूक्ष्म तत स्थूल,
पवन डाल है मन है मूल ।

गुह्य ज्ञान कथ लेहु अपार,

सुन ले गोरख कहूं विचार ॥१४

गोरख उवाच ८.

स्वामीजी कौण गुरु है कौण चेला,

किहि विधि अनंत सिद्धो से मेला ।

ब्रह्म कँवल का कहिये भेव,

गोरख भणे सुनो दत्तदेव ॥१५

श्री दत्त उवाच

अवधू परमात्म गुरु आत्म चेला,

सहज सुरत होय अनंत सिधों से मेला ।

ब्रह्म कँवल उरध मुख खेला,

सांभल गोरख उनमुनि केला ॥१६

गोरख उवाच ९.

स्वामीजी कौण है उनमुन कौण है कला,

किस विध सूले त्रिकुटि ताला ।

नाद बिंद का कहिये भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥१७॥

श्री दत्त उवाच

अवधू उनमुन ध्यान पवन मुख कला,

नाद मुख खूले ताला ।

दशबें द्वारे बिन्दु का वास

सांभल गोरख नाद प्रकाश ॥१८॥

गोरख ऊवाच १०.

स्वामीजी ! कौण है कंटक कौण उचाट,

किहि विधि खुले ब्रह्म कपाट ।

अगम पंथ का कहिये भेव,

गोरख भणो सुणो दत्त देव ॥१९॥

श्री दत्त ऊवाच

अवधू ! कंटक सोई जिहि अचिन्तित क्रोध,

उचाट सोई आतम विरोध ।

गुरु मुख खुले ब्रह्म कपाट,

सांभल गोरख अजबा बाट ॥२०॥

गोरख ऊवाच (११)

स्वामीजी कौण है दया कौण धरण,

कौण है बूढण कौण है तरण ।

कहा कर्म कहा ज्ञान को भेव,

गोखर भणो सुणो दत्तदेव ॥२१॥

श्री दत्त ऊवाच

अवधू ! आतमा दया ध्यान है धरण,

संशय बूडण ज्ञान है तरण ।

क्रिया जाल सोई है करम,

ज्ञान सोई बिर्वाजित जो करम ॥२२

गोरख उवाच [२२]

स्वामीजी कौण है बंध्या कौण है मुगता ।

कौण है जोगी कौण है जुगता ।

देव कला का कहिये भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥२३

श्री दत्त उवाच

अवधू ? बंध्या सोई करम ही बंध,

मुक्ता सोई रहे निरद्वंद ।

जोगी सोई जुगति मन रहे,

गोरख सुणो दत्त यूँ कहै ॥२४

गोरख उवाच (१३)

स्वामीजी कौण है मुक्ति कौण है जोग,

कौण है काया लागे रोग ।

इनका हम सूँ कहिये भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥२५

श्री दत्त उवाच

अवधू मुक्ति सोई जो जुगति कर पाली,

जोग सोई जो विषय निराली ।

रोग सोई मन भ्रमत रहे,

गोरख सुणो दत्त यूँ कहै ।२६।

गोरख उवाच १४.

स्वामीजी कौण है भ्रम कौन है धर्म,

कौन है निश्चय कौण है अधर्म ।

अगम ज्ञान का कहिये भैव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।२७।

श्री दत्त उवाच

अवधू भ्रम सोई जो व्यापे संशय

धर्म सोई दर्शन आ दिशय ।

निश्चल सो जो लौ में रहे,

अधर्म सोई जो मिथ्या कहै ॥२८॥

गोरख उवाच १५.

स्वामीजी कौण है मिथ्या कौण है सांचा,

कौण है सारा कौण हैं काचा ।

कौण कहै शब्द का भैव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ।२९।

श्री दत्त उवाच

अवधू माया मिथ्या ब्रह्म है सांचा,

शब्द सु सारा पिन्ड जु काचा ।

शब्द विचार जहां मन रहे,
गोरख सुणो दत्त यूँ कहै ।३०।

गोरख उवाच [१६]

स्वामीजी कौण है काया कौण है माया,
कौण भ्रम जग धंधे लाया ।

अपार धंधा का कहिये भेव,
गोरख भणो सुणो दत्तदेव ।३१।

श्री दत्त उवाच

अवधू अन कल्पंता लागी माया,
करम आचार तहां लौ काया ।

ज्ञान बिना जग धन्धे लाया,
सांभल गोरख भेद बताया ।३२।

गोरख उवाच (१७)

स्वामीजी कौण ज्ञान है कौण सु ध्यान,
कौण मन कोन है आसन ।

ज्ञान ध्यान का कहिये भेव,
गोरख भणो सुनो दत्तदेव ।३३।

श्री दत्त उवाच

अवधू ध्यान सोई ब्रह्म मूल है,
सोई ज्ञान सब गल लहै ।

मन सोई तहां मन हो समान,

आप सु जाने सोई आसान ॥३४

गोरख उवाच (१८)

स्वामीजी ज्ञान समान कौण है जान,

शशि हर सूर सध को आन ।

आप प्रकाश अगोचर भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥३५

श्री दत्त उवाच

अवधू ! जाणो सो परचे है ज्ञान,

गुरु मुख लेता भेद पिछान ।

शशि हर सूर अगोचर वास,

सुण हो गोरख कहूं प्रकाश ॥३६

गोरख उवाच [१९]

स्वामीजी ! कौण अगोचर कौण प्रकाश,

कौण घर खेले आप निरास ।

कौण सिद्ध का कहिये भेव,

गोरख भणे सुणो दत्तदेव ॥३७

श्री दत्त उवाच

अवधू ब्रह्म अगोचर मन प्रकाश,

परचे घर खेले आप निरास ।

परम ज्योति तहां सिद्ध गम रहै,

गोरख सुणो दत्त यूं कहे ॥३८॥

गोरख उवाच २०.

स्वामीजी ! कौण है परचो कौण है प्रतीत,

कैसे अस्थिर चंचल चित्त ।

मन पवना का कहिये भेव,

गोरख भणो सुणो दत्तदेव ॥३९॥

श्री दत्त उवाच

अवधू गुरु परचे तो मन परतीत,

निश्चय स्थिर चंचल चित्त ।

पवन स्थिर ता मन थिर रहै,

गोरख सुणो दत्त यूं कहे ॥४०॥

गोरख उवाच २१.

स्वामीजी कौण निश्चय ले बंधे बंध,

जरा मरण अजरावर कंध ।

गगन पद का कहिये भेव,

गोरख भणो सुणो दत्तदेव ॥४१॥

श्री दत्त उवाच

अवधू निश्चय ले सो जौन पड़े काया,

त्रिगुण रहे तमो गगन समाया ।

सहज पद परम निरवाण,

सांभल गोरख ए परमाण १४२।

गोरख उवाच [२२]

स्वामीजी कौण शक्ति है कौण शिव,

कौण तीन भुवन का जीव ।

कौण है आशा पूरा भेव,

गोरख भणो सुणो दत्तदेव १४३।

श्री दत्त उवाच

अवधू शक्ति सोई जो सब ही सोवे,

शिव सोई सबही को पौषे ।

जीव सोई तीन भुवन का नाथ,

सोई संगी सो पुरवे आस १४४।

गोरख ऊवाच (२३)

स्वामीजी कोण तत्व ले कथिबा ज्ञान ।

कौण तत्व ले धरिबा ध्यान ।

कौण समाधि तुम लागे भेव,

गोरख भणो सुणो दत्तदेव १४५।

श्री दत्त उवाच

अवधू आत्म चिन्ह ने कथिबा ज्ञान,

तत्व विचारिबा धरिबा ध्यान ।

दत्त कहे हम सहज समान

सांभल गोरख पद निरवान ॥४६॥

गोरख उवाच (२४)

स्वामी जी कौण तत्व तुम रहो समाय,

कौण तत्व तुम मध्ये आय ।

कौण परचे तुम कहते भेव,

गोरख भणो सुणो दत्तदे ॥४७॥

श्री दत्त उवाच

अवधू ज्ञान तत्व मैं रहूं समाय,

चैतन तत्व मो मैं आय ।

त्रिगुण परचे गुरु गम कोई,

निश्चय धर्म ज्ञान गम सोई ॥४८॥

गोरख उवाच (२५)

स्वामीजी तुमेव दत्त तुमेव देव,

आदि मध्य तुम जाणो भेव ।

तुम नारायण तुम कृपाल,

तुम हो सकल विश्व के पाल ॥४९॥

श्री दत्त उवाच

अवधू तुम हो गोरख तुम रक्षपाल,

अनन्त सिद्धों में तुम भूपाल ।

तुम ही शंभूनाथ निवारण,
प्रणवे दत्त गोरख प्रणाम ॥५०॥

गोरख उचाव (२६)

स्वामीजी दरशन तुम्हारा देव,
आदि अन्त मध्य पाया भेव ।
गोरख भणे दत्त प्रणाम,
भोग योग में परम निधान ॥५१॥

॥ इति दत्त-गोरख संवाद ज्ञान प्रदीप समाप्तः ॥

अथ गोरख-गणेश गोष्ठी-संवाद

स्वामीजी तुम कहाँ से आये, कहाँ तुम्हारा नाम ।
अवधू निरंतरि ते आये, योगी हमारा नाम ॥
स्वामीजी जोगी तो बोलाए, जिन अनेक महारम खेल रचाए ।
ब्रह्मण्ड रचाया, तुम्हे तो कौण जोगी दरशाया ।
अवधू मैं निरंजन जोगी, शब्द अतीत ना चेला मैं सौ योगी ।
स्वामीजी निरंजन योगी, शब्द अतीत ना चेला ।
कैसे करि जाणिये, कैसे करि प्रमाणिये ॥
अवधू रहित करि जाणिये, ए शब्द करि प्रमाणिये ।
स्वामीजी रहित ते का बोलिये, शब्द ते का बोलिये ।
अवध रहित त्रिगुण रहत बोलिये,
शब्द ते बोलिये सर्व ते विवर्जित ।

स्वामीजी सर्व ते विवर्जित ते का बोलिए ?

त्रिगुण रहित ते का बोलिए ।

अवधू सर्व ते विवर्जित सूक्ष्म त्रिगुण बोलिए,

सत्त्व, रज, तम ।

स्वामीजी सूक्ष्म ते का बोलिए,

सत्, रज, तम ते का बोलाए ।

अवधू सूक्ष्म बोलिए दृष्टि न देख्या जाय ।

मुष्टि न गह्या जाए, एता एक सूक्ष्म बोलिए ॥

सत्त्वगुण—विष्णु, रजोगुण—ब्रह्मा, तमोगुण—रुद्र ।

तीन गुण—पांच तंत, पच्चीस प्रकृति का अदम बोलिए ।

प्रश्न :—

स्वामीजी ! त्रिगुण ते का बोलिये ?

पांच तन्त ते का बोलिये ?

पच्चीस प्रकृति ते का बोलिये ?

उत्तर :—

अवधू ! तीन गुण ते राजस, तामस, सात्त्विक बोलिये ।

पांच तंत पृथ्वी आप (जल), अग्नि, वायु, आकाश बोलिए

(१) पृथ्वी की प्रकृति—अस्थि, मांस, त्वचा, नाडी,

रोमावली ए बोलिए ।

(२) आग की प्रकृति—लार, रुधिर, सूत्र, शुक्र, पत्तीना

ए बोलिए ।

- (३) तेज की प्रकृति—निद्रा, तृषा आलस्य, क्रोध,
क्षूधा ए बोलाविए ।
- (४) वायु की प्रकृति—चालणा, धारणा, बलावणा,
संकोचण, प्रसारण, बोलाविए ।
- (५) आकाश की प्रकृति—लज्जा, माया, मोह, काम,
भय ए बोलाविए ।

प्रश्न :—

- (१) पृथ्वी का कौण वरण (२) आप का कौण वरण
(३) तेज का कौण वरण (४) वायु का कौण वरण
(५) आकाश का कौण वरण बोलाविए ।

उत्तर :—अवधू !

- (१) पृथ्वी का पीत वर्ण (२) आप का श्वेत वर्ण (३) तेज रक्त
(४) वायु हरा (५) आकाश श्याम ए वरण बोलाविए

प्रश्न :—

- (१) पृथ्वी का कौण स्वाद (२) आप का कौण स्वाद
(३) तेज का कौण स्वाद (४) वायु का कौण स्वाद
(५) आकाश का कौण स्वाद बोलाविए !

उत्तर :—

- (१) पृथ्वी का पीठा (२) आप का खारा (३) तेज का
तीखा (४) वायु का खाटा (५) आकाश का मिजला

प्रश्न :—स्वामीजी !

- (१) पृथ्वी का कौण स्वभाव ! (२) जल का कौण स्वभाव !
 (३) तेज का कौण स्वभाव ! (४) वायु का कौण स्वभाव !
 (५) आकाश का कौण स्वभाव !

उत्तर :—अवधू !

- (१) पृथ्वी बैठी (२) आप शीतल (३) तेज ताता
 (४) वायु चलता (५) आकाश ऊभा

प्रश्न :—स्वामीजी !

- (१) पृथ्वी का कौण गुरु ! (२) आप का कौण गुरु !
 (३) तेज का कौण गुरु ! (४) वायु का कौण गुरु !
 (५) आकाश का कौन गुरु ?

उत्तर :—अवधू !

- (१) पृथ्वी का गुरु मन देवता वाचा स्वरूपा
 (२) आप का गुरु चन्द्र देवता बुद्धि स्वरूपा
 (३) तेज का गुरु सूरज देवता अग्नि स्वरूपा
 (४) वायु का गुरु ईश्वर देवता आनन्द स्वरूपा
 (५) आकाश का गुरु गोरख (निरंजन-व्यापक) देवता
 अविगत रूपा

प्रश्न :—स्वामीजी !

- (१) पृथ्वी का कौण घर ? कौण द्वार ! कौण आहार !
 कौण निहार ! कौण व्यौहार !

- (२) जल का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ?
कौण निहार ? कौण व्यौहार !
- (३) तेज का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ?
कौण निहार ? कौण व्यौहार ?
- (४) वायु का कौण घर ? कौण द्वार कौण आहार ?
कौण निहार कौण व्यौहार ?
- (५) आकाश का कौण घर ? कौण द्वार ? कौण आहार ?
कौण निहार ? कौण व्यौहार ?

उत्तर :—अवधू !

- (१) पृथ्वी का कलेजा घर, गुदा द्वार, खाई पीछे अहार,
अमरी बजरी निहार, लोभ लालच व्यवहार ।
- (२) जल का ललाट घर, इन्द्रि द्वार, त्रिया आहार, बिन्दु
निहार, भोग-मैथुन व्यवहार ।
- (३) तेज का पीता घर चक्षु द्वार, दृष्टि आहार, हरष
निहार, मोह व्यवहार ।
- [४] वायु का नाभी घर, नासिका द्वार, वासना [गंध]
आहार, निरवासी, निहार पिण्ड खण्ड व्यवहार ।
- [५] आकाश का ब्रह्मण्ड घर, श्रवण द्वार, नाद आहार,
जिभ्या निहार, अहं-क्रोध व्यवहार ।

प्रश्न :—स्वामीजी !

- [१] पृथ्वी की कौण भारजा ? [२] आपकी कौण भारजा ?

- (३) तेज की कौण भारजा ? (४) वायु की कौण भारजा ?
(५) आकाश की कौण भारजा ?

उत्तर :—

- [१] पृथ्वी की भारजा साधू नवता
[२] आप की भारजा मनसा-चोरटा
[३] तेज की भारजा कल्पना-चण्डाली
[४] वायु की भारजा चिता-डाकण
[५] आकाश की भारजा असाधन-वृत्ति

प्रश्न :—स्वामीजी !

- [१] पृथ्वी कौण गुणी ? [२] जल कौण गुणा
[३] तेज कौण गुणा ? [४] वायु कौण गुणा ?
[५] आकाश कौण गुणा ?

उत्तर :—अदधू

- [१] पृथ्वी मूल गुणी [२] जल बृद्ध गुणा
[३] तेज रूप गुणा (४) वायु अमल गुणा
[५] आकाश मैथुन गुणा?

प्रश्न :—

पांच तन्त का वरण, स्वभाव, गुण भी कह्या,
गुरु घर द्वार अहार, व्यवहार कह्या ।

पांच तंत की उत्पत्ति कहां ते कहो—तोषपति ।

उत्तर :—अवधू ।

अविगत ते उत्पत्ति ओऊं, ओऊं उत्पत्ति ते आकाश,

आकाश उत्पत्ति ते वायु, वायु ते उत्पत्ति तेज,

तेज उत्पत्ति ते तोया, तोया ते उत्पत्ति पृथ्वी ।

मही ग्रासं ते तोया, तोया ग्रासं ते तेज,

तेज ग्रासं ते वायु, वायु ग्रासं ते आकाश

आकाश ग्रासं ते अविगत रहत आवंते न जावन्ते ।

निरंजन देवता पाणी जिद, अग्नि पूठ, पवन का थंभा,

सुरत निरत को सोधि शुन में समाया हो देवता !

॥ इति पिण्ड-ब्रह्माण्ड का निवारण बोलिये ॥

* अथ आत्म बोध वर्णन *

ॐ शब्द ही ताला, शब्द ही कूंची,

शब्द ही भया उजियाला ।

कांटा सेती कांटा टूटे, कूंची सेती ताला ।

सिद्धि मिले तो साधक निपजे, जब घट होय उजाला ॥१॥

अलख पुरुष मेरो दृष्टि समाना, संशय गया अपूठा ।

जब लग पुरुष तन मन नहीं खोजे, कथे बदे सब भूँठा ।

सहज स्वभाव मेरो दृष्टि में फीटी, सींगी नाद संग मेला ।

अमृत पिया विषय रस टारया, गुरु गारडू अकेला ॥२॥

सर्प मरे बांबीऊं बिनासै, कर बिन डमरु बाजे ।
 कहै नाथ जो इहि विधि जीते, पिंड पडे तो सतगुरु लाजे ।३।
 दरशण गांहि दरशण देख्या, नीर निरन्तर भाई ।
 आपा मांहि आप प्रकटिया, लखे तो दूर न जाई ।४।
 चक्रमक वर के अग्नि जरे, यूं दधि मथ घृत कर लिया ।
 आपा मांहि आपा प्रकटया, तब गुरु संदेशा दिया ।५।
 सुरति गहो संशय जिमि लागो, पूंजी ज्ञान न होई ।
 एक शरण सतगुरु की रहवा, टारया टरे ना कोई ।६।
 अमरा भरया भरया गम करिके, गुरु चरणां में रेण ।
 परचा ले तो तापर निपजे, नहीं तौ सहवे न वेणा ।७।
 जे लूटयां ले खबर न पाई, कसि कसि डाई डांडी ।
 तन मन को कछु खर न पाई, सुरत बिगोया रांडी ।८।
 बिद और भग बाधनि और बिन दांतां नहीं खाया ।
 प्रण पुरुष का मन भर पाया, छोड़ विगूते माया ।९।
 सोद्यो लाकड़े ज्यूं घुण लागे, लोहे लगे काई ।
 बिन परतीती कहां गुरु कीजे, काल हूं ग्रास्या जाई ।१०।
 रांडो तज्या नपुंनिया जोवे, पुरुष तज्या नाही नारी ।
 कहे नाथ ए दीनूं बिनसे, धोखा की असवारी ।११।
 बैद सर मुख ब्रह्म होता सुभायाऊं आ बानी ।
 अश्वमेध ब्रह्मा जिग निपजे, जुगत जमाया पानी ।१२।

तो जगराड्यां जोगेश्वर ब्याया, संगे शक्ति सूंफेरा ।
 जा पद मंदिर पुरुष विलूंब्या, वही मंदिर घर मेरा । १३।
 या रहणी में घर घर वासा, जोग जुगति से पाया ।
 सिद्ध समाधि पंच घर में ला, गोरख तहां समाया । १४।
 हाली भीतर खेती निपजे निणे, बैंगु में ताल समाई ।
 बैरखे मौर कहूं कैसा वेणा, नहीं अफूटी आई । १५।
 गनपद मांहि पेहों कर फंद के दादुर भरयाई लारे ।
 चातक में चौमासा बोले, ऐसा समा है मारे । १६।
 आशा तृष्णा थिर है बैठी पद परचे सुषमो दाया ।
 सूखा तरुवर कूपल मेलही, इस विधि निपजे काया । १७।
 पूरब बेश पछांही घाटी, जनम लेख्या हमारा जोग ।
 गुरु हमारो नावेगर केही, ए मेटे भ्रम वियोग । १८।
 नव ग्रह मार अग्नि में झोंक्या, इन्द्र लाग्या रह डोरी ।
 परम पुरुष पिजरे में विलुम्ब्या, भई अगम गति मोरी । १९।
 अकथ कथाय मन अक्षर बाच्या, अगम गमन करि लिया ।
 हंस विलूंब्या बूंद न ढलके, बहि सरवर बंध दिया । २०।
 बोले नाथ गगन घर वासा, अन्तर बसिया जाई ।
 परम पुरुष मेरे कागज मांड्या, दिन दिन कला सवाई । २१।
 ऐसी रमभू जैसे नख सिख भेदे, शंक्या शरीर न लूटे ।
 चलत फिरत पद मांहि समाया जनम मरण भय छूटे । २२।

मरि मरि जाई सु संशय मांही, तन काम जग दाभया ।
 धोखे जनम गमावे प्राणी, सो पद पंथ न सूझया । २३।
 अटल साधन निर्मली जोगी, ता पुरुष की रहनी ।
 या रहनी अमृत रस निपजे, लोहां कंठन पद मैं दहनी । २४।
 नीर नीर अमीने मुख बरणे, सीचे बाग हमारा ।
 या रहनी ते पय के बर निपजे, तिसियां मरे संसारा । २५।
 इन्द्र मिला ते धरणी निपजे, इन्द्रो बरणे देही ।
 गुरु हमारा वाणी बोल्या, माणिक चुण चुण लेही । २६।
 पारस से पत्थर अविनाशी, ऊँ अष्ट धातु मैं सोना ।
 यूँ सब जग मांहि समझ अविनाशी, ता घट पापन पूना । २७।
 बहती नदी भाव घर थांभी, सूरज देखी पछांही ।
 दुर्लभ देवल मन अगोचर, ता बेल्यां फल खाही । २८।
 नवलख किरण अफूटी प्रकट, कोटि किरण मुख आगे ।
 कहे नाथ धरम का पैडा, संशय बूंद न लागे । २९।
 गिरही के घर जनम हमारा, संगत सूरति दिहाणी ।
 कहे नाथ जीव ब्रह्म एके, जब शिव घर शक्ति समाणी । ३०।
 अनहद धुनि में रहे निहमारा, तत्त देखि मन लागी ।
 आपा मांहि आपा प्रकटया, तब जाय धोखा भागी । ३१।
 जे नर योनि अयोनि शंभू, सिद्ध पुरुष से मेला ।
 जा रहनी में थान, हमारा, ता घटि पुरुष अकेला । ३२।

ऊरध भरे सो थिर ह्वै जीवे सूधे घटे संवारी ।
 अंधें लोचन सब जग सूझे, सालिम सब अंधियारी । १३।
 तूंबो मैं इह लोक समाना, त्रिवेणी रहि चन्दा ।
 ब्रूभत है कोई ब्रह्म जानी, अनहद नाद अभंगा । १४।
 आवा गमन भरम का मारग, पुरुषां पन्थ बताया ।
 शब्द अतीत अनाहद बोले, अन्तरगति समाया । १५।
 विमल पंथ बिजली जहां चमके, घर हरता घर गाजे ।
 ता रहनी से जोगी का घर, अनहद बाजा बाजे । १६।
 जा पद मंदिर ध्वजा फरहरे, मढ़ी सँवारे चेला ।
 कोटि कला जहां की अनहद बानी, गावे पुरुष अकेला । १७।
 नौ लख पातर आगे नाचे, पीछे सहज अखारा ।
 ऐसे मन ले जोगी खेले, तब अन्तर बसे अडारा । १८।
 ज्ञान गहे तो तृष्णा हारे, सूरत देखि पछांही ।
 सतगुरु मिले तो संशय भागे, मूल बिचारया मांही । १९।
 अंजन मांही निरंजन भेट्या, तिल मधि भेंट्या तेल ।
 मूरति मांही अभूरति परस्या, भया निरंतरि खेल । २०।
 जहां नहीं तहां सब जग देख्या, कहा न कोई भवे ।
 सब जग अमत भूला डोले, गुरु की गति समावे । २१।
 हवरी डिबिया अजब अनोखी, अंगानि बल मुलतान ।
 हीरे में हम जोगेश्वर, जिपना अपगा पद निरशान । २२।

बाफ न निकले बूंद न ढलके, सहजे अंनोठी भरि २ रांधे ।
 सिद्ध सप्ताधि जोग अभ्यासो, तब गुरु परचे सर सांधे ।४३।
 धीरज पद भज डोरी भेली, धुनि समानि असमान ।
 अटल उलीचा अखै पद, तह गोरख दीवान ।४४।

॥ इति ज्ञान तिलक समाप्त ॥

✽ अथ अभय मात्रा कथन ✽

ॐ अकल पथ अकल का मारग सति, भूमि सेज अपाण ।
 प्राणानाथ जोगी पवन गोटिका,
 निज भंवर गुफा सहज संयम को पीन ।
 मरजादा मेखली, निह केवल जो गोटिका ।
 जुगति उड़ाणी शील कंथा, क्षरा टोंवी, जरणा आधारी ।
 अंतरगति भोली सांच मूँभा, अकल पत्र आमिति डाबी ।
 त्रिगुण डाहा अल्हाद कपाली, संतोष तिलक धीरज दंड ।
 बमक पहाड़ी तप चक्र, मूल कमंडल मन उदिक ।
 महा अमृतभाजन कलस, पात्र त्रिपति सिद्ध दिया रहैगसि ।
 विचार पुस्तक जिभ्या रसायणी ।
 सरबंगी कला वैद्या काल बंचणी ।
 निर्भय नगरी अमरपुर पटण, अकल बन खण्ड ।
 अभग तरवर, अचल छाया अमर मूल ।
 जग पलवे अभी कली सूँ सील, संतोष फल ।

निराकार कल्प वृक्ष, सिंभ सरोवर, निरास मढ़ी ।
 अतीत देवता ज्ञान दीपक, अकल प्रहरी, अयाचिक भिक्षा
 शब्द सींगी अनाहद किंगुंरी, पवन अधारी अष्टांग जोग,
 अमृत प्याला, निश्चल रिद्धि, सत करामात ।
 अजपा जाप, अलख दरशण, निरंतरि ध्यान, अटल समाधि
 सार मात्रा तत्सार, अलख निरंजन निराकार ।
 कथत गोरखनाथ जोगी, सतसत भाखत बाबा मच्छंद्र नाथ ।

॥ इति अभय मात्रा समाप्त ॥

* अथ बत्तीस-लक्षण, ज्ञान-परीक्षा *

निरलोभी, निश्चल, निर्वासी निह शब्द ।
 विचार पारख्या, निरमोही निरबंध ॥
 निशंक निरवाण, विवेक पारख्या ।
 सरबंगी सावधान, सतसार ग्राही ॥
 संतोष पारख्या, अयाचिक अवांचिछक ।
 अमानिक अथोर न बल पारख्या ॥
 निष्प्रपंच निःउदीन, निरालेप निरमजहब ।
 पारख्या दया सत्य, सारक निष्कपट अज्ञान ॥
 पारख्या शुचि संयम श्रोत, शांत दांत तितिक्षा मन ।
 भक्तिकाल वर सिद्धां पाई, साधिका पाई जो जन उतरे पार ।

॥ इति ज्ञान पारख्या लक्षण कथन ॥

✽ अथ सृष्टि पुराण वर्णन ✽

एक ऊपर लेखा नाहि, दोई पाछे सृष्टि नाहि ।
 आषा पाछे परजां नाहि, गुरु पाछे ज्ञान नाहि ।
 दया ऊपर धर्म नाहि, शील ऊपर शुचि नाहि ।
 जप ऊपर तप नाहि, सांच ऊपर शास्त्र नाहि ।
 नासिका ऊपर गंध नाहि, नैत्रा ऊपर दृष्टि नाहि ।
 श्रवण ऊपर श्रुति नाहि, गर्भ उपरांत नर्क नाहि ।
 खल उपरान्त हानि नाहि, घर उपरांत जाय नाहि ।
 चंदन उपरान्त काष्ठ नाहि, शिव उपरांत देव नाहि ।
 काया ऊपर क्षेत्र नाहि, शब्द ऊपर बाण नाहि ।
 निरभय ऊपर भय नाहि, संयम ऊपर पाक नाहि ।
 संतोष ऊपर सुख नाहि, अमृत ऊपर सिद्ध नाहि ।
 अनुभव ऊपर करामात नाहि, माता उपरांत जन्म नाहि ।
 चिन्ता उपरांत रोग नाहि, काल उपरांत बैरी नाहि ।
 बृद्ध ऊपर मृत्यु नाहि, ज्ञान ऊपर ग्रन्थ नाहि ।
 अजपा ऊपर जाप नाहि, नारायण ऊपर इष्ट नाहि ।
 निरंजन ऊपर ध्यान नाहि, संत सभी कथ्या याहि ।
 विद्या ऊपर मति नाहि, बोद्ध ऊपर बाध नाहि ।
 क्रोध ऊपर अग्नि नाहि, शील ऊपर शान्त नाहि ।

॥ इति सृष्टि पुराण समाप्त ॥

* अथ चौबीस सिद्धि कथन *

प्रथम चौबीस सिद्धि बोलिए, पृथ्वी ऊपर ते कौण-कौण ?
 प्रथम अणिमा सिद्धि को लक्षण, माया शुन सूके ।१।
 महिमा सिद्धि को लक्षण, लघु दीघ देह दिखावे ।२।
 गरिमा सिद्धि को लक्षण, ब्रह्मा का स्वरूप दिखावे ।३।
 लघिमा सिद्धि को लक्षण, अनेक रूप देव धरे ।४।
 प्राप्ति सिद्धि को लक्षण, स्वेच्छा रूप काम करे ।५।
 प्रकाशित सिद्धि को लक्षण, सर्व तत्व को वश करे ।६।
 असत्या सिद्धि को लक्षण, उपावे वस्तु को खपावे ।७।
 आवेश्या सिद्धि को लक्षण, ब्रह्मादिक आज्ञा में रहे ।८।

॥ इति अष्ट भूतनाथ सिद्धि कथन ॥

मनोज सिद्धि के लक्षण, सबै कामना को जाणो ।९।
 छछु मुक्ता सिद्धि के लक्षण, मनमाने तहां घर छोड़े ।१०।
 अनुराग सिद्धि के लक्षण, शीतल करे सभी को भरे ।११।
 परकाया प्रवेश सिद्धि के लक्षण, और काया में प्रवेश करे ।१२।
 भूमि सिद्धि के लक्षण, भूमि आज्ञा में रहे ।१३।
 जल सिद्धि के लक्षण, जल आज्ञा में रहे ।१४।
 दूर श्रवण सिद्धि के लक्षण, दूरी की बात सुना करे ।१५।
 दूर दर्शण सिद्धि के लक्षण, दूरी वस्तु का दर्श करे ।१६।
 काम कामोद सिद्धि के लक्षण, कामना इच्छे सो करे ।१७।
 अप्रहता सिद्धि के लक्षण, मन माने तहां जाय ।१८।

देविता सलि सिद्धि के लक्षण,

सर्व देवता सूं केलि करि आय ॥१६॥

रूपता सलि सिद्धि के लक्षण, सर्व देवता को रूप धरे ॥२०॥

विजय सिद्धि के लक्षण, कहूं हारे नाहि विजय करे ॥२१॥

त्रिकाल सिद्धि के लक्षण, छः मास आगे की कहे ॥२२॥

अग्नि सलि सिद्धि के लक्षण, अग्नि में जले नाहि काय ॥२३॥

शब्द सलि सिद्धि के लक्षण,

सत्य शब्द कहे सो हो जाय ॥२४॥

इति चौबीस सिद्धि, ब्रह्मज्ञानी के आडी आवे ॥२५॥

इति चौबिस सिद्धि, आई होय तो सतगुरु प्रसाद ॥२६॥

ते त्यागे सोई जोगेश्वर, सोई ब्रह्मज्ञानी वसत ।

अपार संशय खोय, यति गोरख समझावे ॥२७॥

इति चौबीस सिद्धि को त्यागे,

सोई परम ज्योति को पावे ॥२८॥

इति चौबीस सिद्धि कथन ॥

* अथ आत्म बोध वर्णन *

सा तो सालिगराम उपाया, टांकी घड़या न किन हूं उपाया ।

न काहू के घर जाया, आपे आप जु अपरम्पार ।

योनि संकट नाथा प्रवशि नहीं, उद्य नाहि करता ।

मनसा करि आप उपाया, जोरनि हारे लिया न जाई ।

ताका मन क्यों जाय, मनाई दास भाव कहा लौ काजे ।
कैसी सेवा भावे सब दास कर

आप ही सबका भला मनावे ।
सालिगराम सो मन ही मांही निशि दिन सेवा होई ।
पार ब्रह्म सूँ मन लपटाया, जानेगा जन सोई ।
मन के भीतर अलख निरंजन, परम ज्योति प्रकाशी ।
मन ही मांही देखन लागा, तब उलटि मिल्या अविनाशी ।
जब लग दूजा भावे भरम है, सूक्ष्म देत दिखाई ।
पतिव्रता को बड़े दशरावे करे तो फिरे बुराई ।
मन ही मांही सहज सपूता, मूरति देश दिखाई ।
शब्द अगाध अनाहद लूँ ब्या, सतगुरु दिया बताई ।
हाथ न पावे कान न नैना, बिन जिभ्या ही गावे ।
पूरण एक इसी घट चेतन, गुरु गम दर्श लखावे ।
पाया सोई आप लखाया, गुरु बिन ज्ञान न पावे ।
सतगुरु ज्ञान लखाया, चेतन, गोरख कहि समभावे ।

॥ इति आत्म बोध समाप्त ॥

* अथ पंचाक्षरी कथन *

गोरखनाथ गोरखनाथ त्रिव स्वरूप, गो इन्द्रिय पालन ।
अगोचर हर गंभीर, गकाराय हर नमो नमः । १।
रहत निरालम्ब अस्थंभ भवन त्रिय ।
राख राख श्रवण भूतानां, रकाराय नमो नमः । २।

खकाराय इक्कीस ब्रह्माण्ड, खेचर जगत गुरुन ।
 क्षेत्रपाल खरंग बसे, खकाराय नमो नमः ।३।
 नाना सास समुदाई, नाना रूप प्रकाशांत ।
 नाद बिंद समो जोशी, नकाराय नमो नमः ।४।
 थापित तल संसार, ब्रह्म अलख अपार ।
 थावर जंगम सचराचर, थकाराय नमो नमः ।५।
 गकार ज्ञान संयुक्त, रकार रूप लक्षणम् ।
 खकार इक्कीस ब्रह्माण्ड, नकार नाद बिंदये ।
 थकार थान मन यो ।६।

॥ इति षडक्षर समाप्त ॥

* अथ रहराशि कथन *

औऊं आदेश आदेश अलख अतीत,
 तदा न होसी धरती आकाश ।
 तदाकाले भू भई हमारी उत्पत्ति,
 माता न लेवी दश मास भार ।
 पिता न करिबा आचार विचार,
 योनि न आइबा नाभिन कटाइबा ।
 पोथी पुस्तक ब्रह्मा न अचाइबा, तहां अलेख पुरुष पटण ।
 अनुपम शिला, तहां बैठे गोरख राई
 तुम दमड़ी चमड़ी का संग्रह करो,
 गुरु का शब्द ले ले दो जग भरी ।

गुपति चक्र चलाओ हथियार, पंडित बुद्धि बहुत अहंकार ।
ऊभा ते सिद्ध बैठा ते पाषाण, गोरखनाथ वाचा प्रवाण ।
अनंत सिद्धों में रह राशि कही, गोदावरी के मेले ऐसी भई ।

॥ इति रहराशि कथन समाप्त ॥

* अथ दया बोध कथन *

आवो सिद्धो खोज बताऊँ, आदि नाथ का पूत कहाऊँ ।
योगारम्भ की याही वाणी, घट नाथ एक करि जाणी ।
योगारम्भ हृदय में मांडों, दया उपावो जूती छांडो ।१।
नागा पावां जे जन सूआ, ताका कारज पेली हुआ ।
आप स्वारथ चालों धूई, तामे चिऊँटी केतो मुई ।२।
तजो कहर नजर बटवा, जिन शान्ति लो हाथ ।
एता आरम्भ पर हरो, यूँ कथे यति गोरखनाथ ।३।
मारग चलता जो धरणि दृष्टि राखे,

तो ताके काज कोई न भागे ।

पहली आरंभ हम भी करतो, जीव जन्तु बहुतेरा हततो ।४।
आरम्भ खोय योगी हो धाया,

लावो निरत सुद्धि मारग जोया ।

अविनाशी गम लाला रंग, रिद्धि सिद्धि ताही के संग ।५।
रिद्धि तो गौरां के साथ, सिद्धि है शंकर के हाथ ।
छांडो अकल सकल की गाथ, ऐसे कहे यति गोरखनाथ ।६।

आसन तजि अनंत जनि जावो, अकल्प भिक्षा बैठा खावो ।
 नातर पांच घर चिताइवा, एकान्त वास रहिवा ।७।
 कण कण पकड़े कोरो नकेल, आई रिद्धि को योगी बेल ।
 हरया सैणा को सतावे जीवे,

सो जोगी कहिये प्रत्यक्ष सीवे ।८।

चकमक कफ का नाम न धरो,

पर आतम का परला जिन भांडो ।

अग्नि न बालो धूआं ना थोटों,

भिक्षा बार कर पात्र ले वोटो ।९।

गवाड़ा बिच आसन जिन मांडो,

मोह लगाये आपा जिन माहो ।

बाई बावड़ी को मन नहीं दीजे,

देखत दृष्टि काया तन छोजे ।१०।

पंडित पढ़ गुण करे न आशा, देखि एकांत रहे निरासा ।

काहे को पढ़ गुण भला कहावे,

जब लग हृदय दया न आवे ।११।

जब लग हृदय दया नहीं आई,

तब लग कहिए शुद्ध कसाई ।

कन कन पकड़े शब्द न बावे,

जोगी कागद कहां ते लावे ।१२।

तन में पोथी मन में लेखिनि, एती निज है सहै तंतनि ।
 साधन शुद्ध पाले संपति, यूँ कथत है गोरख जति । १३।
 उहां चलिबे का करो विचारा, निद्रा अल्प रसुलष आहारा ।
 घट का देव औघट गावे, तहां जोगेश्वर लागी सेवे । १४।
 पंच चेला मिल पूरया नाद, धरण गिगन बिच भई आवाज ।
 दीपक एक अखंडित बाती, तहां ज्योगेश्वर थाप न थापी । १५।
 अगम अगोचर सकल ब्रह्मंड, ता दीपक के चरण न पिंड ।
 श्रवण शीश चरण नहीं हाथ

सो दीपक देख्या गोरखनाथ । १६।

ता दीपक के डाल न मूल, ता दीपक के कली न फूल ।
 ता दीपक के रंग न रूप, ता दीपक के छांह न धूप । १७।
 ता दीपक के शब्द न स्वाद, ता दीपक के विद्या न बाद ।
 ता दीपक के मोह न माया,

सो दीपक शुन्यै सून्य समाया । १८।

॥ इति दया बोध समाप्त ॥

✽ अथ ज्ञान माला कथन ✽

औऊँ संतोष सारिषा न पिता, क्षमा सारिषी न माता ।
 दशा सारिषी न भगति, क्षुधा सारिषी न अगति । २।
 आरम्भ सारिषा न भ्राता, निरंजन सारिषी न दाता ।
 कूरूप सारिषा न रतन, जत सारिषा न जतन । ३।

बैराग सारिषा न ज्ञान, निराकार सारिषा न ध्यान ।
 पुनिता सारिषी न शांति निशी सारिषी न राति ।३।
 जाग्रत सारिषी न ज्योति, संबाद सारिषी न बाति ।
 दोदार सारिषी न ज्योति, काया सारिषी न पोथी ।४।
 दया सारिषी न छाया, अहार सारिषी न माया ।
 क्षमा सारिषी न रूप जत सारिषा न अनूप ।५।
 सतगुरु सारिषी न विद्या, हरि नाम सारिषी न रक्षया ।
 प्रकाश सारिषा न पण्डिता, मन सारिषा न पुच्छिता ।६।
 मंत्र सारिषा न जाप, बालक सारिषा न निहपाप ।
 भाव सारिषी न सेवा, अतीत सारिषा न देवा ।७।
 शब्द सारिषी न बाण, क्रोध सारिषा न पाण ।
 मुक्ति सारिषा न पद, रहत सारिषा न हृद ।८।
 प्राण सारिषा न आधार, जोग सारिषा न सार ।
 स्वप्न सारिषा न छल, बुद्धि सारिषा न बल ।९।
 गुरु सारिषा न अलख, आप सारिषा न लख ।
 रहत सारिषा न अपार जोग सारिषा न सार ।१०।
 चाचा सारिषा न बंध, काया सारिषा न संध ।
 अस कथी श्री शंभूनाथ, ताही सार कह गोरखनाथ ।११।

—: अथ रोमवलि अंग कथन :—

मख सख पिता रज तांत तम गाडे पारो
 लोही मांस त्वचा नाडी, ए चार धातु माता की बोलाए ।
 बीरज हाड गोंदा मीजी, ए तीन धातु पिता की बोलाए ।
 ए सप्त धातु शरीर की बोलिए, दोई हाथ दोई पैर छाती ।
 लिलाट बट अष्टांग जोग बोलिए ते जोग जोगो ।
 बिंदु भेद मुद्रा, तिन साधे ते सिद्ध बोलिए ।
 तो स्वामी कौण बंध बांधिये ते कौण भेद भेदिये ?
 कौण मुद्रां मूंदिये, ए घट बोलिये ते कौण कौण ?
 अवधू मन बंध बांधिये, पवन भेद भेदिये ।
 बिन्दू मुद्रा मूंदिये ।
 तो स्वामी कौण विमल विचारे, कौण करे कौण केरे ?
 तो अवधू मन विमल विचारे, सूर करे चन्द्र केरे ।
 तो स्वामी हिन्द पीर क्या बोलिये ?
 जिद पीर क्या बोलिये ?
 तो अवधू हिन्द पीर मन बोलिये, जिद पीर पवन बोलिये ।
 तो स्वामी खैचरी भौचरी, गुप्त प्रकट बोलिये ते कौण कौण ?
 तो अवधू खैचरी बोलिये मन, भौचरी बोलिये पवन ।
 गुप्त बोलिये तो लीला ज्ञान प्रकट बोलिये भौतिक शरीर ।
 तो स्वामी शरीरार्थ परमार्थ

गूढार्थ ए घट बोलिए ते कौण कौण ?

तो अवधू शरीरार्थ बोलिए, ते शरीर प्रक्रिया जान ।
परमार्थ बोलिए प्राण भेद, गूढार्थ बोलिए ज्ञान ।
तो स्वामी चार पीर बोलिए, घट भीतर ते कौण कौण ?
तो अवधू मन छिद्र, शरीर ईश्वर, चित चोरंगो, ज्ञानगम ।
ए चार पीर बोलिए ।

तो स्वामीजी चार तत्त प्रबल, घट कौण कौण ?

तो अवधू चक्षु द्विष्टी कहे क्यूं लीजे दीजे ।

श्रवण सुरति कहे क्यूं बोलाए ।

नासिका कहे सुगंध वासना अमलादिक लीजे ।

जिभ्या कहे क्यूं खारो, मीठो खाइए ।

तो स्वामी दिशा चार बोलिए, पेट भीतर ते कौण कौण ?

तो अवधू शब्द उत्तर, पवन पश्चिम,

इन्द्रिय दक्षिण, सुरत पूर्व ।

तो स्वामी चार उपदिशा बोलिये घट ते कौण कौण ?

तो अवधू (१) ऊरम (२) कूरम (३) ज्योति (४) ज्वाला ।

अवधू (१) ऊरम बोलिए, पवन, (२) कूरम बोलिए मन ।

(३) ज्योति बोलिए नैत्र, (४) ज्वाला बोलिये श्रवण ।

तो स्वामीजी चार खाणी बोलिये,

सेरज, जेरज, इन्डज, उद्भ्रज ।

तो स्वामीजी सेरज कौण बोलिये ! जेरज कौण बोलिये ?

इन्डज कौण बोलिये ? उद्भ्रज कौण बोलिये ?

तो अवधू सेरज बोलिये हाड, जेरज बोलिये वीरज ।
 इंडज बोलिए नैत्र, उड्डिज बोलिये रोमावली ।
 तो स्वामी चार वाणी बोलिए, घट भीतर ते कौण कौण ।
 अवधू सो देह बोलिये, शरीर संयम बोलिए पवन ।
 सुपाव बोलिए प्राण, अतीत बोलिए परम पद ।
 महासमुद्र में हाड, जेना न ग्रामदा मही अजौना ।
 शम्भू बोलिए खाणी, बाणी विचारते निराकार बोलिए ।
 ओऊंकार मध्ये ज्योति जाणिए,

ऊरम धूरम ज्योति ज्वाला भेद ।
 रवी की चार कला मन का, हस्ती बिब जल पीवे ।
 ढोई पक्ष चीन्हे सोई, ले कला जोषे ।
 बारह कला सूरज की सोलह कला चन्द्रमा की ।
 गुरु जिसको नहिं लखावे, चेला तिसका अन्ध ।
 तो स्वामी बारह कला सूरज, की

ताके गुण घट भीतर कौण ?

अवधू ! बारह कला के नाम सूरज को बोलिए—

(१) चित (२) तरंग (३) दम्भ (४) भ्रमाया
 (५) प्रगहन (६) प्रपंच (७) हेत (८) बुद्धि
 (९) काम (१०) क्रोध (११) लोभ (१२) दृष्टि
 इति बारह कला सूरज की बोलिए ।

स्वामीजी ! सोलह कला चंद्रमा की, ताके गुण घट में कौण ?

अवधू ! चन्द्रमा की सोलह कला के नाम ए बोलिए—

१. शांति २. निवृत्ति ३. क्षमा ४. निरमल ५. निश्चल
६. ज्ञान ७. स्वरूप ८. पद ९. निरवाण १०. निर्विष
११. निरवासिक १२. निरंजन १३. अहार १४. निद्रा
१५. मैथुन १६. बोद्ध, सोलह कला चन्द्रमा की बोलिए ।

चार तन की, चार मन की, चार वाणी की,
चार अस्तरगति की कला शोडष चंद्रमा की पावे ।

॥ इति रोमावली समाप्त ॥

✽ अथ पंच मात्रा कथन ✽

ओं अनादि बोलंत, खरतर पंथ, जिभ्या इंद्रि दीजे बंध ।
जोग जुगति में रहै समाय, सो जोगेश्वर जय कराय ।
द्वदश मंदिर शिव स्थान, वहां उत्तम ब्रह्म गियान ।
द्वादश निश्चल एक में रहै, ते जोगी सिर टोपी दहे ।
देखो ए तंत शुभ्य आकाश, पंच तंत महापुरुष का बास ।
पांच तंत ले उनमुन रहे, इच्छा होय दूजो गंद कहे ।
पांच तंत का करहूं विचार, बहूर भीतर एककार ।
भिक्षा मांगे नगरी द्वार, माया मोह तजै जंजार ।
एता एक अवधू पंच तंत मात्रा का,

विचार वदत गौरख एककार ।

सुण हो जोगी अध्यात्मक जोग, अर्ध उर्ध मधि कमली भोग ।

मन सूं डे, तो मस्तक सूं ड, नहीं तो परे नरक का कुण्ड ।
 आदि संख अनिल उपाया,

अनंत सिद्धां ले मस्तक लगाया ।
 कान सुणाय गुरु दीनी दीक्षा, नवखंड पृथ्वी मांगे भिक्षा ।
 भिक्षा मांग निरंतरी रहे, तो जोगी काने मुद्रा बहे ।
 औं ह्राथ गल कंथा पाय चंद सूर थेगला लगाय ।
 अऊठ कोटि दशा धागा भरे, गुरु प्रसाद दुस्तद तरे ।
 काया कड़ासन मन जो गोटा, पांचों इन्द्री करो कछोट ।
 जत सत क्रिया शब्द चलाबो, ऊंडा लाग डोबा पावो ।
 दक्षिण उत्तर पश्चिम पूर्व पावा ते जोगी जे गोटा चलावा ।
 माथे जट्टा दर्शण विकाल, अवध जोगी बचो काल ।
 सोंगी सेंली अरु जप माला, बाई फेरो गगन मकारा ।
 नवे बहतर पवना मूल षट चक्र गोरी त्रिशूल ।
 अलख पुरुष तहां को ध्याया, नगर कर्ट ऊर्ध ते आया ।
 चित चक्र में जे पवना गहे, ब्रह्म अग्नि प्रकटे जल रहे ।
 विषम २ करे सब कोय, बिना निरंजन मुक्ति न होय ।
 मूल चक्र तहां सहस्र दल बाट मन पवना ले खोल कपाट ।
 गोरख विषम लागा बाद, गोरख ले बजाया नाद ।
 वृषभ लिया मृग का रूप, मारया मृग भया अवधूत ।
 पूर्व जाता पश्चिम हंस, मारया मृग भीख ले मंस ।
 अपना दर्शन देखा जाय, बाही के संग रहे समाय ।

अंतरगति को जोगी बोय, सींगीनाद गगन धुनि होय ।
 आत्म रूप को पाया पाय शक्ति चंदन गगन समाय ।
 पांचों इन्द्रिय पूरे नाद, ते अंग अरधे जा सींगी नाद ।
 अनहद नाद ऊर्ध का मूल, चंद सूर सूक्ष्म अस्थूल ।
 वारि गंगा, पारि गंगा, भधि जोगटा ध्यान ।
 गंग जमुन ले मेरु चढ़ाई, तहां प्रकटया ब्रह्म का ज्ञान ।
 सैली सींगी और षडासण, अनंत सिद्धों लीना जाय ।
 द्वादश डोबी उधर का मेला,

अलख मटी तहां गंग न समाय ।

सोना रूपा गिरहा कूं दीना,

यो जोगारंभ तहां सिद्ध समय ।

आदि पत्र ले ईश्वर को दिया, आदि धर्म स्वर्ग तप नाय ।
 बारह वर्ष का भूहा मसान, गोरखनाथ जगाया ।
 चौसठ योगिनी भिक्षा पूरे, अनंत सिद्धां आदि पत्र पाया ।
 आदि पत्र आदि उत्तम अनादि धर्म शंकर कूं पेश ।
 नुगरा कूं गड़बड़ बोलिए, सुगरा कूं उपदेश ।
 एता एक अवधू पंच तंत मात्रा का विचार ।
 अनंत सिद्ध तहां सुनिया विचार ।

मच्छंद्र प्रताप यति गोरख कहे,

ते अवधू पंच भू आत्मा लहे ।

जे जोगी पंच मात्रा का जाणो भेव,

सो आपे करता आपे देव ।

पंच मात्रा जोगी बूझे, ताकूँ सकल देवता त्रिभुवन सूझे ।

॥ इति पंच मात्रा समाप्त

✽ अथपंच अग्नि कथन ✽

ओऊँ मूल अग्नि का रेचक नाव,

सो पीले रक्त पात अरु भाव ।

पेट पूठि दोऊ सम रहे, ते मूल अग्नि यति गोरख कहे ।१।

भूयंगम अग्नि का भूयंगम नाम, तजिबा भिक्षा भोजन गाम ।

मूल की मूल अमीरस धीर,

तिस को कहिये सिद्धों पवन शरीर ।२।

ब्रह्म अग्नि ब्रह्म नाला, धरि लेऊँ जान लठत पवना ।

रवि शशि गगन समान ।३।

ब्रह्म अग्नि मधि सिकबा कपूर,

तिस को देखि मन पवन जोईबा दूर ।

शिव घर शक्ति अहि निशी रहे,

ब्रह्म अग्नि यति गोरख कहे ।४।

काल अग्नि तीन भुवन प्रवीनी, उलटत पवन सोखत पानी ।

खाया पीया वाक हो रहे, काल अग्नि यति गोरख कहे ।५।

रुद्र अग्नि का त्राविक नांव, सोखि लेय नदी सिंधु जल गांव ।

उलटत केश पलटे चाम, योगाग्नि हैं ताका नाम ।६।

ज्ञान अग्नि को उलटि अबाध,

संयम खिवत योग युक्ति का साध ।

ज्ञान अग्नि भरपूर रहे, सिद्ध संकेत यति गोरख कहे ।७।

पूरब को पीवत वायु कुम्भ की काया शोधन ।

रेचक तजत विकार, आटिको आवागमन विवर्जित ।८।

सिद्ध का मरन कोई साधु जाणे पंच अग्नि गोरख बखारो ।

पांचों अग्नि सम्पूर्ण भई,

अनन्त सिद्धों में यति गोरख कही ।९।

॥ इति पंच अग्नि समाप्त ॥

✽ अथ शिक्षा दर्शन ✽

अवगति ते उत्पत्ति ओऊं, औऊं उत्पत्ति ते आकाश ।

आकाश उत्पत्ति ते वायु, वायु उत्पत्ति ते तेज ।

तेज उत्पत्ति ते तोया, तोया उत्पत्ति ते पृथ्वी ।

मही रूप देवी का रंग, जल रूप ब्रह्म का वरण ।

तेज रूप विष्णु की माया, पवन रूप ईश्वर की काया ।

आकाश रूप नाद की छाया, नाद रूप अवगति उपाया ।

शून्य निरंजन भूचर देव, भूचर का नहीं पाया भेद ।

अकल अगोचर अनंत साखी सा राम भेद,

परम भेद भेदानि भेद ।

आत्मा ध्यान ब्रह्मज्ञान खेचरी मुद्रा,

भूचरी सिद्धि चाचरी निद्धि ।

अगोचरी बुद्धि उनमुनी अवस्था,
 अभय करामात अतीत देवता ।
 अवगति पूजा अनिले आश्रम,
 अध्यात्म विद्या पद्य आसन ।
 अमृत प्याला, मनसा माई, पंच भूचेला, मन रावल ।
 पवन भोगी, दशवें द्वार, प्राणनाथ जोगी,
 सहज आवणा अवधू ।
 संयम जीवणा, समता नदी,
 निः केवल जल, त्रिवेणी स्नान ।
 त्रिकालक संध्या अजपा गायत्री,
 अनूप मन्त्र, निरंजन माला ।
 निराकार ज्वाला छः सौ सहस्र इक्कीस करि मेला ।
 नख सिख पबना बाधिवा भेला ।
 नाद अनाहद निः शब्द वाणी,
 जीवते शीव ब्रह्म होइबा प्राणी ।
 देही विदेही अविचल धीर, रुधिर पलट फिर होइबा खीर ।
 दृष्टि वदिष्ट जोईबा नैन, पवन निरञ्जन बोलिबा वैन ।
 शब्द निः शब्द होईबा थूल, आदि का अनादि होइबा मूल ।
 नाद बिद गाईबा गगन आकाश,
 ना बढे घटे ना होई विनाश ।
 धरणी गगन पर मारग न कोई, जे चले तहां काल न होई ।

अखण्ड मढी जहां जोइबा ध्यान,

जुग जुग तालि कथिबा ज्ञान ।

मूल चक्र तहं पलटे जिंद, पलट काया थिर होई कन्ध ।

मूल बंध वज्र कछोटा पकड़िबा धीर,

मति उडीणो बंधिबा बीर ।

जत जो गोटा आसन पूर, अमृत धारा कमण्डल होइबा सूर ।

ओं भया ने पाया नीर, चेतना विभूति अंग शरीर ।

अजर कंथा नहि वाद विवाद, अनाहद वाद महारस स्वाद ।

संतोष तिलक महर निरवाण, करि एकता हरिबा प्राण ।

मन बैरागी मन जोइबा रूप, बसत गोरख ए तत अनूप ।

दया दण्ड तहां त्रिकुटी ध्यान, क्षमा लाठी टेकेबा मान ।

चन्द सूर दोई जाइबा धार, फेर गगन तहां भे मति बार ।

ते जोगी जग जुगता, अविचल सार स्वच्छद सुगता ।

भै अम पार बोई पीछे ब्रह्मण्ड बंदिया पूर,

गुरु शब्द अनाहद मानव सूर ।

अनन्त सिद्धां तहां सारमसार ।

निश्चल थिर तत निराल, अयाचिक भिक्षा अईबा थान ।

गुरु मच्छंद्रनाथ शिक्षा पदरिबा कान ।

अकल पडी बीझोली निरास, संजीवन मात्रा बीज नास ।

एकंत रहबा बंचबा सूल, आवा गवन का न होईबा मूल ।

बारा कला देवी सोलह कला देव,

सुषुम्ना नाड़ी बंधिवा भेव ।

नों सौ जौगण चलाइवा साथ, बुरजि बहतर जगाइवा नाथ ।

नव खण्ड पृथ्वी मांगवी भिक्ष्या,

त्रिलोक मेदिनी होइगी ऊपक्ष्या ।

चौदह ब्रह्मंड जहां जोइवा हार, षट दर्शन ए पंथला सार ।

दार बहनी ज्युं होइवा भेव, असंख पंखुड़ी गगन करी सेव ।

वदत गोरखनाथ अविचल जाप,

लिपे नहीं तहां पुण्य न पाप ।

शून्य ध्यान सोलह कला माला

आपन शंभू गोरखनाथ बाला ॥

॥ इति शिक्षा दर्शन समाप्त ॥

* अथ अष्ट मात्रा कथन *

प्रश्न—

स्वामीजी अष्ट मुद्रा बोलिये, घट भीतर ते कीण कौण ?

उत्तर—

अवधू मूलनी मुद्रा ई का नाम, ब्रह्मा ले उत्पत्ती काम ।

पार ब्रह्मा समोक्तवा मुद्रा तो भई मूलनी ।

नाभी मध्ये जलश्री मुद्रा काम क्रोध ले उत्पत्ति,

काम क्रोध समोक्तवा मुद्रा तो भई जलश्री । १ ।

हृदय मध्ये खीरनी मुद्रा ज्ञान दीप ले उत्पत्ति ।
 ज्ञान दीप समोक्तवा, मुद्रा तो भई खीरनी । २।
 मुख मध्ये खेचरी मुद्रा, स्वाद विस्वाद ले उत्पत्ति ।
 स्वाद विस्वाद समोक्तवा, मुद्रा तो भई खेचरी । ३।
 नासिका मध्ये भूचरी मुद्रा, गंध विगंध ले उत्पत्ति ।
 गंध विगंध समोक्तवा, मुद्रा तो भई भूचरी । ४।
 चक्षु मध्ये चांचरी मुद्रा, दिष्टि विदिष्टी ले उत्पत्ति ।
 दिष्टि विदिष्टि समोक्तवा, मुद्रा तो भई चांचरी । ५।
 श्रवण मध्ये अगोचरी मुद्रा, शब्द कुशब्द ले उत्पत्ति ।
 शब्द कुशब्द समोक्तवा, मुद्रा तो भई अगोचरी । ६।
 ब्रह्माण्ड मध्ये उनमनि मुद्रा परम ज्योति ले उत्पत्ति ।
 परम ज्योति समोक्तवा, मुद्रा तो भई उनमनि । ७।
 इति अष्ट मुद्रा जाणो भेव, आपे करता आपे देव ।

॥ इति अष्ट मुद्रा समाप्त ॥

✽ अथ अष्ट चक्र कथन ✽

ओऊं गोरखदेव अष्ट चक्र घट भीतर बोलिए ते कौण कौण ?
 अवधू प्रथमे आधार चक्र बोलिए,
 गुदा स्थाने चतुर्दश कंवल, षट् शत स्वास । १।
 तिस चक्र उपरि इष्टि चक्र,
 लिंग स्थाने षट् दल कंवल षट् सौ स्वास । २।

तिस चक्र ऊपर मणिपुर चक्र,

नाभि स्थाने, दश दल कँवल ।

षट् सौ स्वास ।३।

तिस चक्र ऊपर अनाहद चक्र मध्य स्थाने द्वादस कँवल ।

षट् सौ स्वास ।४।

तिस चक्र ऊपर विशुद्ध, चक्र, कण्ठ स्थाने, षोडस कँवल ।

सहस्र अजपा गायत्री पारब्रह्म ध्यान ।५।

तिस चक्र ऊपर अग्नि चक्र नैत्र स्थाने, षोडस दल कँवल ।

सहस्र स्वास ।६।

तिस चक्र उपर गिनान (ज्ञान) चक्र ब्रह्माण्ड स्थाने,

एक सहस्र दल कमल, एक सहस्र स्वास ।

अजपा गायत्री पारब्रह्म ध्यान ।७।

तिस चक्र ऊपर सूक्ष्म चक्र, शुन्य स्थाने,

इक्कीस सहस्र कँवले ।

इक्कीस सहस्र स्वास एवं अष्ट कँवल का जाणो भेव,

सो आपे करता आपे देब ।८।

॥ इति षट्चक्र वर्णन समाप्त ॥

यहां पर रात-दिन के स्वासा प्रमाण से षट् चक्र साधना विधि से भिन्न चक्र सिद्धि क्रम से दैनिक साधना की प्रणाली देते हुए दर्शाया है कि नित्य प्रातः साधक को नियम से नियत जप से चक्र जागृति होती है । टीकाकार

* अथ नरप बोध कथन *

सुण हो अवधू शुद्ध बुद्ध का विचार,

पांच तन्त ले उत्पन्ना संसार ।

बहले आरम्भ घट परचा करो,

निस्पति नरप बोध कथत यति गोरखनाथ ।१।

हूजे आरंभ काम क्रोध अहंकार,

मनसा माया विषय विकार ।

हंसा पकड़ गात जिन करो, तृष्णा तजो लोभ पर हरो ।२।

छांडो द्वंद रहो निरद्वंद, तजो अलंगन रहो अबंध ।

सहज जुगति ले आसण करो,

तन मन पवना दृढ़ करि धरो ।३।

संयम चितवों जगति अहार, निद्रा तजो जीवन का काल ।

छांड तजूं तत मन बंदत, मंत्र मोटे का घात पाखंड ।४।

जड़ी बूटी का नाम न लेस्यूं,

राजा दरबार पाव जिनि देस्यूं ।

स्यू भ्रम मोह न बस कर छाड़ो,

सकल आभरण स्वर कर मांडो ।५।

सकल विद्या वा जग दास, ब्रह्मे विधि लां टारंभ वास ।

अपना मनवा उलटा धारे काम क्रोध अहंकार जारे ।६।

जिन महारस फिरो जिन जिन देश,

जटा भार बांधों मत केश ।

रुख बूटी जड़ी ना करो

गिरी पर्वतां चढ़ि प्राण जिन हरो । ७।

पूजा जप तप कू जिन जापे, जोग मांहि बैठावो आपे ।
वेद विराज छांडे कुव्यवहार, पढ़िबा गुणिबा, लोकाचार । ८।
बंधु चेला का संग निवार,

अणिमादि मसारा बाद विव टार ।

एको एका रमो भूगाल, एता कहिए ए प्रति काल । ९।

सभा देखि मांड भूजनि ज्ञान, गूंगा गहला हो दूर अजान ।

राव रंक की छांड कू आस, भोजन भिक्षा भयऊ उदास । १०।

सींगीनाद पयाणा देंभू देव कला काल खिन लेभू ।

बग ज्यू ध्यान माड़ि सद रहो,

श्वान जति की निशि गहो । ११।

रस रसायन गोटिका निवारो,

रिद्धि पर हरो सिद्धि लेऊं विचारो ।

पर हरो सुरापान अरु भंग ताते उपजे रंग बिरंग । १२।

नारी सारी की गरी, ए तीनू सतगुरु परहरो ।

इति नरप बोध कथत, यति गोरख यू भखत । १३।

॥ इति नरप बोध समाप्त ॥

✽ अथ आत्म बोध कथन ✽

ओऊं आसन करि पद्यासन बांधि,

पछिले आसन पवना सांधि ।

मन मुरछावे लावे तारा, गिगन शिखर जले अंगारा ।१।

प्रथम बैठ वायु दरि बंध पवना खैले चौसठ संघ ।

नव दरवाजा लावे ताला, दशवां मध्ये होय उजाला ।२।

ऐसा भूयंगम योगी करे, धरती सौषे अंबर भरे ।

गगने स्वर पवने स्वर तारणी,

धरती का पाणी ले अंबर आणी ।३।

ता जोगी की जुगति पिछारणी,

मन पवना ले उनमुनि आणी ।

मन पवना ले उनमुनीं रहे, तो काया गरजे गोरख कहे ।४।

चढे महारस अमरा भरे, आरंभ योगी असृत भर हरे ।

योग रीति खेले ब्रह्मण्ड, मन पवना संग खेले खण्ड ।५।

उलटे चंद राहु कूं गेहे, सूरज उलट केता संग देहे ।

चंद धरा सूरज थिर रहे, तत जाण योगेश्वर कहे ।६।

धृति योग चंद उरध गहे, द्वादश पवना उनमुन रहे ।

अनहद सवाई धुनि बाजे, पश्चिम द्वारे पवना गाजे ।७।

अग्नि अंतर ब्रह्म अग्नि प्रजारे, पंच चोर ले ज्ञान संभारे ।

जोगी अनुभव धर दिवला दिये,

ता जोगी की काया काल न छिपै ।८।

हलि हलि पवना काया गरजे, सूर होय अग्नि अंतर जूझे ।

ज्ञान खडग ले जूझवा द्वार,

अजीत जीतवा पंच गहि सार ।९।

अष्ट पर्वत असाधि साधिबा,

नौ दरवाजा दृष्टि करि बांधिबा ।
 दरवाजे दशवें कूंची सार, मैं मत हस्ती बोध्या बार । १०।
 भीतर राजा जूंभरण हार, चहुं दिश जाता राख्या मार ।
 राजा भुके विषमी घाई, मन पवना ले रह्या समाई । ११।
 मन पवना की विषमी संधि, चंद सूर दोऊ सम करि बंधि ।
 नो सै निवासी सायर सोखे,

जोगी सोखि सदा भरि पोखे । १२।

बिन पुस्तक बांधिबा पुरान, सरवस्ती उचरै सों ब्रह्मज्ञान ।
 अजर सोखे बजर करे, सर्व दोष काया ले हरे । १३।
 खेरे सोखे लावे बंध, तो अजरावर थिर होय कंध ।
 सोखे पोखे जाले बाले, अहिनिशि ब्रह्म अग्नि प्रजाले । १४।
 ब्रह्म अग्नि पाप को खाय, संधे संध पवन लुकाय ।
 मन होय धीर धार लहे पवना,

शिवपुर जाता बरजे कवना । १५।

ब्रह्मपार सोखे बंधई जिंद खीर सागर सोखे अजरावर कंध ।
 अजरा सोखे बजर करे, रोग व्याधि क्षुधा सब हरे । १६।
 जड़ी बूटी भूलो मत कोय, पहले रांड वैद्य की होय ।
 जड़ी बूटी जे अमर करे, वैद्य धनवन्तरी काहै मरे । १७।
 सोने रूपे सोभे काज, तो क्यों राजा छोड़े राज ।

पसवा होय जपे नहीं जाय,

सो पसवा मोख क्यूं हो जात ।१८।
रिद्धि सकेले रोलानी धरे, गुरु न खोजे मूरख मरे ।
रोलानी आगे बैठा फूल, गुरु का वाचा गया जु भूल ।१९।
अकल पूर सके सकल निपाव, मीठा बोले झूठा भाव ।
सत बोले सतवादी लोग, झूठ बोले महापापी ।
देखत भोंदू बिषया खाई, झूठा बोले मर मर जाई ।२०।
जैसा करे तैसा फल पाय इकोतर से पराया नरक ले जाय ।
एक पुरुष बहु भांति नारी, सर्व निरंतर आत्म सारी ।२१।
सर्व निरंतर भरपूर बहिया, आत्म बोध सम्पूर्ण कहिया ।
पापे पुण्ये लिपे नहिं कोई, गोरख साथे मुक्ति होई ।२२।

॥ इति आत्म बोध कथन समाप्त ॥

* इति श्री गोरख बोध ग्रन्थ समाप्त *

* *

॥ ॐ ॥

* अथ भजनमाला प्रारंभ *

* राग कान्हड़ा -तिथि योग वर्णन *

बन्दे गोरख एकंकार, सोलह तिथि का करूं विचार ।टेरा।
अमावस आसन दढ़ होई, आत्म परचे मरे न कोई ।
मूल सहस्र पवना फिरे, बंक नाल नव बहतरि भरे ।१।

पड़वा बहे आपछि की आदि, सतगुरु शब्दा सहज समाधी ।
गगन मंडल में रहे समाय, चारों युग हेली टल जाय ।२।
द्वितीया है दोऊ कुल उधरण धीर,

उनमुन पवना अचल शरीर ।
बाहर भीतर एकंकार, गुरु प्रसाद भये निधि पार ।३।
त्रितिया त्रिवेनी करो स्नान, पाप पुण्य दोऊ देवो दान ।
तब योग युगति पावो विश्वास,

जरा मरण नहीं कंध विनास ।४।
चौथ चंचल निश्चय करो, काल विकाल दूरी पर हरो ।
जम जोरा का मरदां मान, सतगुरु कथिया पद निरवान ।५।
पांचम पंच तंत की संध याता मंगल रालो बंध ।
अमोरस धारा छिन छिन पीवो,

गुरु प्रसादे जुग जुग जीवो ।६।
छट्टु षट्चक्र विचारो सार,

रिद्धि सिद्धि बुद्धिमती अखिल भंडार ।
अर्थ द्रव्य की छांडो आस, काया कामनी भोग विलास ।७।
सातम सत रज तुम गुण बंध, पावो जनम मरण का संध ।
अबीहड़ अजर अमर पद लहो,

जन पवना ले उनमुन रहो ।८।
आठम अष्ट भैरों नौ नाथ,

अनंत सिद्धां सूं मिहया सवाणी बात ।

ओ अचंभा कथ्या न जाय, करत महारस गगन समाय । १६।
नवमी नव सिद्धि काया संभारि, पाप पुण्य देखो पटतारि ।
बूढ़े पाप तिरे सत धरम, काया बाहर जात न जनम । १७।
दशमी दश दिश लागे बंध, जत सत संयम थिर होय कंध ।
धरम करम गुरु वाचा चीन,

ज्ञान विचक्षण बाणी बीन । ११।
एकादशी एकादश रंग, रुद्र इंद्रियां पाया काया संग ।
भेंटया देव दरस्या देवा, आप पुजारी आप ही देवा । १२।
द्वादशी तिथि कर पूरे द्वार, द्वादश दिनकर तप सूभे सार ।
तहां चढि भैरुं रहा समाय,

सतगुरु कथ्या ज्ञान अभाय । १३।
तेरस त्रिकुटि सम करि भेल,

चंद सूर दोऊ धुनि करि भेल ।
एक सिद्ध रुंधा नव घाट, सतगुरु खोजे ऊभा बाट । १४।
चवदश चवदह रतन विचार,

काल विक्काल आवे ताहि निवार ।
आपै आप देखो पटतारि, उत्पति प्रलय काया सकारि । १५।
पूनम पूगी मन की आस, आया मोह तजि भये उदास ।
सोलह कला सम्पूर्ण चंद, गुरु प्रसादे थिरके कंध । १६।
सोलह तिथि कला की संघ, मच्छंद्र प्रसाद थिर भया कंध ।
अग धीर जब प्राछे थीर, अनंत सिद्ध तहां गोरख पीर । १७।

राग कान्हडा, चौपाई सप्तवार (२)

जोग सुलग ही बारम्बार, सतगुरु शब्दां सहज विचार ।टेर।
 आदि ते शोधो आवागमन, घट में राखो दृढ़ करि पवन ।
 दशबें तो शिव पूजा द्वार, तो गुरु पावो आदित बार ।१।
 सोमवार मन धरिबा शुनि, निश्चल काया पाप न पुनि ।
 शशिहर वर्षे अपरम्पार, सोमवार गुण दूताकार ।२।
 मंगल विषमी माया बंध, चंद सूर दोऊ सम करि संध ।
 जरा मरण बजो भौ काल, तो गुरु पावो मंगलवार ।३।
 बुद्धवार गुरु दीनी बुद्धि, व्यारो काया पावो सिद्धि ।
 शिव घर शक्ति पाणी भरे, तो बुद्धवार गुण एता करे ।४।
 बृहस्पतिवार विषम मन धरो, पांचू इन्द्रिय निग्रह करो ।
 शंखणी शोधो पवना द्वार, तो गुरु पावो बृहस्पतिवार ।४।
 शुक्रवार शोधिबा शरीर, कहां बसे हंस कहां बसे खीर ।
 नव बहतर पवना बहे, शुक्रवार कोई बिरला लहे ।६।
 थावर थिर करि आसन देय, बारह सोलह मन करि लेय ।
 शशि हर के घर आवे भान, ता दिन थावर गंग समान ।७।
 सातों वार पार के राशि, काला भैरु घाल्या पाशी ।
 पेड़े प्राणी परचा भया, सप्तवार यति गोरख कहा ।८।

राग चौपाई नोग्रह कथन (२)

सात वार ग्रह नौ का खोज,

आपा लखे फकर अनुभोज ।टेर।

आदित्यवार ज्ञान का ताप, आपै व्योमत पुण्य न नाप ।
 दोउं पक्षां सूं आरंभ करे, अनुभव करि जमपुर पर हरे ।१।
 सोमवार से संगठन भरो, सतगुरु खोजो दुस्तर तरी ।
 दशवें द्वारे दीजे बंध, अजरावर थिर होय कंध ।२।
 मंगलवार म्हे पाया भेव, आतमा पाछे निरंजन देव ।
 पंच पुहुप ले पूजा करे, मति बुद्धि ले शिवपुरी संचरे ।३।
 बुधवार मति बुद्ध प्रकाश, अहिनिश रहबा जोग अभ्यास ।
 डढकर लोचन अन आशा पाश,

सिद्ध साधो अमरापुर वास ।४।

बृहस्पतिवार विषम गढ लिया, ज्ञान खड्ग ले विहंगं किया ।
 अर्भूठ कोट दल दिया पयाना,

यम मस्तक बाजे निशाना ।५।

शुक्रवार सूक्ष्म जल साधि, लहर न परसे सहज समाधि ।
 आया मार कर अस्थिर होय, आत्म परचे मरे न कोय ।६।
 थिर थावर शनिश्चर बार, काया भीतर सातों बार ।
 सतगुरु खोजो उत्तरो पार, सुषुप्त वेद सुषुमना विचार ।७।
 वेद पुराण पढ़े चित लाई, विद्या ब्रह्म कहाँ थिर थाई ।
 मछिचंद्र प्रताप यति गौरख कहे, सप्तवार कोई विरला लहे ।
 आदित आख्या सोम श्रवण, मंगल मुख प्रवाण ।
 बुद्ध हृदय बृहस्पति नाभि, शुक्र ते इन्द्रि जाणय ।८।

शनि गुदा वायु राहु ते मन केतु ते नासिका रहे ।
सप्त वार नौ ग्रह देवता, काया भीतर कहे ।१०।

राग आसावारी पद (४) कान्हड़ा चौपाई

मारो मारो सर्पणीं निरमल जल पेठी

त्रिभुवन डसतां गोरख दीठी ।टेर।

मारल्यो सर्पणीं जगाई ल्यो भंवरा,

जिन मारी सर्पणीं ताको कहा करे जोरा ।१।

सर्पणी कहे मैं श्रमला मलिया,

ब्रह्मा विष्णु महादेव छलिया ।२।

माती २ सर्पणी दशूं दिश धावे,

गोरखनाथ गारडू पवन बिगलावे ।३।

सर्पणी कहे भूंपरी निगूतो, जाना गोरख भूंपड़ी सूती ।४।

आदिनाथ नाती मच्छंदर नपूता,

सर्पणी मारी गोरख अवधूता ।५।

राग कान्हड़ा—चौपाई पद आशा (५)

बांधो २ बच्छड़ा पीयो २ खोर,

कलि अजरामर होई शरीर टेर।

बारह बच्छड़ा सोलह गाई, धेनु दुहावत रेणु बिहाई ।१।

अचराचर धेनु कचरा न खाई,

पांच ग्वाला याकूँ मारण धाई ।२।

आकाश का धेनु त्रिभूवन का राया,

सींग न पूँछ वाके खूर नहीं काया ।३।

इन सुरही का दूध जु भीठा,

पावे गोरखनाथ गगन बैइठा ।४।

राग आशावरी (६)

मनवा राजा जायलो कौनसी घाटी,

आगे है भरम की टांटी ।टेर।

कौन दिशा न आई मन पवना, कौन दिशा को जासी ।

कौन दिशा न भजन उबरिया, कौन दिशा रम जासी ।१।

अगम दिशा से आई मन पवना, पश्चिम दिशा ने जासी ।

बंकनाल से भजन उबरिया, रणंकार में रम जासी ।२।

ऊंची नीची सुरता कर न, चंदा जोत रहवासी ।

तत्व नाम को तेल पूर ले, जगां करे दिन राती ।३।

बारह आंगुल सींघता; सोलह अंगुल फाटी ।

सवा हाथ रो भंगवा चोलो, त्रिवेणी री घाटी ।४।

दीपक में एक दीपक दरशे, दीपक में एक भाई ।

भाई में परछाई दरशे, वहां ही है मेरा साई ।५।

भगत मच्छंदर सुण जती गोरख, जात हमारी तेली ।

तेल तेल सो काढ़ लिया, है, खल बलदां ने मेली ।६।

राग पद (७)

बोलता नजर नहीं आया गुरुजी,

ज्यां के चौंच पांख नहीं काया ।टेर।

बिन पाल इक सरवर भरिया, नीर नजर नहीं आया ।

मेरे सतगुरु ऐसे सेलानी, वहां बैठ मल २ न्हाया ।१।

बिना पात एक तरुवर देख्या फूल नजर नहीं आया ।
 मेरा सतगुरु ऐसा सैलानी, वहां बैठ फल खाया ।२।
 बिना पांव एक हस्ती देखा, शीश नजर नहीं आया ।
 मेरा सतगुरु ऐसा बहुरंगी, अंकुश मार हटाया ।३।
 एक जोगी के पांच पुत्र हैं, पचचीस जोगण लाया ।
 एक अचम्भा ऐसा देख्या, बेटी ने बाबल जाया ।४।
 जोगी एक किले से उतरा, संग लिए चारुं चेला ।
 चारों ने यों जग भरमाया, जोगी रमे अकेला ।५।
 धरती जाजम तम्बू असमाना, सत का सूरज बणाया ।
 कहे मछन्द्र सुण जती गोरख, दुनियां दुरंगी बणाया ।६।

राग पद ८

चौसठ कला में खेल हमारा, और वारता सब भूँठी ।टेर
 हर भज हर भज हीरा परखले, समझ पकड़ थारी मजबूती ।
 लागी लगन मत छोड़ो साधो,

गांठयां धुली है रेशम की ।१।

सत सुमरण का सेल बणाले, ढाल बणाले धीरज की ।
 काम क्रोध ने मार हटादे, जद जाणू तेरी रजपूती ।२।
 पांचू चोर बसे काया में, उनकी पकड़ो शिर चौटी ।
 पांचा ने आर पचीसूँ बस कर,

जब जाणू तेरी बुद्ध मोटी ।३।

इन्द्र घटा ले सतगुरु आया, अमृत बूदां हृद बूटी ।
 त्रिवेणी का रंग महल में हंस ले लालां हृद लूटी ।४।

रुणभ्रुण रुणभ्रुण बाजा बाजे,

भिलमिल भलके वा जोहो ।

ऊँकार का सोहंगकार मैं, हंसला चुगता निज मोती । १।

पक्की घड़ी का तेल बराले, कांण न राखो एक रती ।

कहे मछंदर सुण जति गोरख,

अलख लखा सो खरा जती । २।

राग आशावरी (६) पद

साधो भाई ! गगन घटी चढ़ जाणा ।

सहजे सुमरण करो अलख का सोई अमर कहाणा । १।

मूल कंवल में गणपति देखो, नाभि कंदल शक्ति बाणा ।

षट् चक्र में निरंतर बासा, पावित्र्य का जाणा । २।

त्रिकुटी पे सुमरण कीना उनमुन तार लगेना ।

उलटो षट् कर्मन को सोधे, योगी युक्ति लखे ना । ३।

मेरु दंड जहां चक्र सुधाना, जाको लखता संत कोई जाना ।

प्रेम भक्त आनंद में राखे, अलख लख्या सोई ध्याना । ४।

त्याग करो तो ऐसा कीना, वचन मान परवीना ।

भीरा भीरा बाजा बजता, लखता संत सुजाना । ५।

अनर लोक एक है काया में, जोगारंभ अलख लखाणा ।

निर्भय आप अमर कर दिया, तब ही देश दिखाणा । ६।

कहे मछंदर सुण यति गोरख, मोहि भर २ प्याला पाना ।

जनम मरण कछ व्यापे नाहीं, नहीं काल भय खाना । ७।

राग पद (१०)

नगर^{में} रमता जोगी आया,

ज्यांकी पारख बिरला पाया ।टेरा।

रंगां न रेखा पाव न भेखा, उनमुन ध्यान लगाया ।१।

किंघा घर आता किण घर जाता, किण घर फेरी देता ।२।

कुण संत ज्ञान ध्यान में बैठा, जोगाभ्यास बतलाया ।३।

पांचू पुरुष पचीसों नारी, एक जोगणी जाया ।४।

शुन्य शिखर पर बालूडो खेले, सम्मुख दरशण पाया ।५।

मच्छंद्र शरण जती गोरख बोलया, अगम संदेशा लाया ।६।

राग कोयारी (११)

का बूभे अवध गगन धरणी,

चंद न सूर दिवस ना रहणी ।टेरा।

ऊंकार निराकार सूक्ष्म स्थूल, पेड़ न पत्र न फूल ।१।

ज्ञान^{में} ध्यान जोग न जुक्ता,

पाप न पुण्य न मोक्ष न मुक्ता ।२।

उपजे न विनसे न अखेह न जाई,

जरा मरण ना व्यान न माई ।३।

गोरख भणे मच्छंद्र दासा,

भाव भक्ति और आसण पासा ।४।

राग आशावरी (१२)

देखो मेरे साहब ने कुदरत कीनी,

काया विच बाग लगाया है ।

ऐसा ऐसा भरत भराया सतगुरु,

सप्त धातु पिगलाया है ।टेरा।

सात आठ क्यारी जो धोरा, बाग जुगत कर पाया है ।

बागवान बागां में बैठा कली कली रंग न्यारा है ।१।

इंद्रलोक से घटा घिर आई, शब्द पियाले गुरु लाया है ।

बंकनाल बरसाई मेरे सतगुरु, सोपां समुद्र भराया है ।२।

बाया बीज सकल में वरता, बीजां बगरा छाया है ।

रणूँकार का सींचा गेला, जब छेड़या गरणाया है ।३।

जिस घर मांही हंसा आया, उसका ही गुण गाया है ।

अच्छंद्र शरणे जति गोरख बोलया,

एक अखंडी ध्याया है ।४।

राग आसावरी (१३)

अवधू ! मन मेरा मतवाला ।

उनमुन चढयो गगन रस पीवे, है त्रिभुवन उजियाला ।टेरा।

गुड़ कर ज्ञान ध्यान करि महुआ, भौरो माटी भारा ।

सुषमण नारी सहज समाना, पीवेगा, पीवन हारा ।१।

दोऊ कर जोड़ चिताई माटी, जुवे सहा रस भारी ।

काम क्रोध दोऊ किया पलीता, छूटी ममता सारी ।२।

त्रिकूटी कोट में सृदग बाजे, तहां मेरा मनबा नाचे ।

गुरु प्रसाद अमर फल पाया, सहज सुषुमना कछे ।३।

पूरा मिले सभी सुख उपजे, तप को ताप बुझाणी ।
गोरख कहे भव बंधन छूटे, जोत में जोत समाणी ।४।

राग आशावरी (१४)

छोड़दे मनवा मन मस्ती, सोहं शिखर गढ़ है बस्ती ।टेरा।
इला पिंगलां अर्धंग नारी चांद सूरज घर रह लगती ।
गंगा जमना बहे सरस्वती, स्वास स्वास, की वहां गिराती ।१।
अष्ट कमल में अलख बिराजे, रंग महल में रहे सगती ।
चौबारा में दीपक जलता, वहां पे सुरता रहे जगती ।२।
हिये उतार हाथ धर लेणा, शीश उतार करो कुशती ।
पांच तन्त गुण, तीनूं भेला राखो,

जबर धरियांरी है जपती ।३।
इसी नगर में डंका लागे, साध सुणे कोई विरला सती ।
भालर शंख पखावज बाजे, जिरा बिच केलि करे हसती ।४।
गोरखनाथ मुक्ति के दाता, पल पल सुमरे पारवती ।
शरण मच्छंद्र गोरख बोलया,

अलख लखया सो खरा जती ।५।

राग पद (१५)

अवधू ! भरया समुन्द्र में मगर रहत पियासा ।
साध बूझे योग युक्ति, कहां है जल रा जासा ।टेरा।
एक अचभभा देखया इसड़ा,

मिथी फिर फिर बूझे है भीठा ।१।
एक अचभभा देखया बूझा, देखल कहे कहां चढ़ती पूजा ।२।

एक अचम्भा देख्या तीजा, बादल में कहां रहती बीजा ।३।
एक अचम्भा देख्या चौथा, दादा गौत मिल पूछे है पोता ।४।
गोरख बोले मच्छंद्र पूता, समता मार भया अवधूता ।५।

राग पद (१६)

अब गुरुजी मिले महा जानी,
ज्यासू पाई में अमर निशानी ।टेर।
उपजे न बिनसे आवे नाहि जावे, नहीं जूझे नहीं हारे ।
जल की तरंग जलो जल रलिया,

अब कौण तिरे कौण तारे ।१।
जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पाणी ।
बिलस्या कुंभ जलो जल रलिया, आ गत बिरला जाणी ।२।
सई सुरत ने सेज धर आणी, सायर लहर समाणी ।
जीबर जाल डाल कर कलवे, मीन हुआ गल पाणी ।३।
गुरु बिन ज्ञान अनुभौ बिन कयणी,

ए सब मिथ्या कहाणी ।
कहे गोरख गूंगे की सेना, गूंगे होय कर जाणी ।४।

राग पद (१७)

सेवा शहारी जानो गणपति देवा,
खोलो म्हारे हृदय का ताला ।टेर।
जल तो चढ़ाऊँ देवा नहीं है अछूता,
जल मछलियां विटोरिया ।१।

फूल तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,
फूलों ने भंवरा बिटोरिया ।२।

दूध तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,
दूधों ने बचछड़ा बिटोरिया ।३।

भोजन चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,
भोजन ने माखियां बिटोरिया ।४।

शोश तो चढ़ाऊं देवा नहीं है अछूता,
शोश को शक्ति ने बिटोरिया ।५।

दोष कर जोड़ यति गोरख बोल्या,
शब्द चढ़ाऊं देवा यही है अछूता ।६।

राग पद (१८)

कर गूजरान गरीबी में रेणा है ।टेरा।
चार खूट में फिरो भलाई, दिल रा भेद नहीं देणा है ।
गगन मंडल में गऊ बियाई, धरती मही जमाणा है ।
माखण माखण साधो खायो, छाछ सकल बरताणा है ।१।
मरदां संधी बांध दोस्ती, क्या तिरिया संग लागो है ।
पल में राजी पल में बैराजी, पल पल नार पराई है ।२।
नैण बांध समझाऊं जीव ने, पर घर पांव न देणा है ।
उण पाणी से रतन नोषजे, एला नहीं गमाणा है ।३।
फिर रह्या प्याला प्रेम का, प्यासा होय सो पीणा है ।
गुरु शरणे जति गोरख बोल्या गगन मंडल घर करण है ।४।

राग आरती (१६)

हरि हरि हरि हो रही आरती,

जय जय बोलो योगी आलम ।

निर्भय नगारा बाजे, अघड़ बम् बम् ।टेरा

तू ही है पटेल तू मेरो पटवारी,

तू ही मेरो मजीदा हाकिम ।१।

तू ही मेरो साहब तू ही मेरो सूबो,

मेरा भेद की तुझे मालम ।२।

चार खूंट चवदा भवन में, सांची फिरे है तुम्हारी कलम ।३।

चार चरण यति गोरेख बोल्या,

आपका हुकम मैं रहूं हरदम ।४।

राग मंगला (२०)

मैं थाने सिमरुं गजानन देवा,

सरस्वती माय शारदा सिमरुं, हृदय करों उजियाला जी ।

निद्रा निवारो भोला नाथ जी ।टेरा

जननी नहीं जायो उदर नहि आयो,

गवरी को पूत कहायो जीओ ।१।

पानी से पतलो पवन से भीणो,

शोभा बरणी न जावे जीओ ।२।

हाथ घालूँ तो म्हारे हाथ न आवे,

मुठियो में नाहि समावे जीओ ।३।

मच्छंद्र प्रताप यति गोरख बोले,

पत बाने वाली राखो जेओ ।१।

राग आशावरी (२१) आशा पद

साधो भाई ! योग मति अति भीनी ।

लखे कोई सतगुरु का बाला, रमज भेद कर चीनी ।टेरा।

चार योग है कौन गुरुजी कहा योग फल कीनी ।

शास्त्र सार सिद्धान्त लखाओ, बंध भेद लख भीनी ।१।

हठ मंत्र राज लय चारों, वृत्ति निरोध सुख लीनी ।

मूल जलंधर बन्ध साधते, सो, उडियान नवीनी ।२।

प्राणायाम युक्ति भेद को कहो, रीति परबीनी ।

कहा साधक का साधन मूल है ? समझ कहो मलहीनी ।

पूरक कुम्भक रेचक भेद ले, अभ्यास बैराग बरीनी ।

रामप्रकाश गोरख मम गाढी, हो गोरख लख तीनी ।४।

राग आशावरी (२२) आशा पद

साधो भाई ! युक्ति योग कर जाना ।

मेरा महारम अटल अगोचर, योग रीति पहिचाना ।टेरा।

यम नियम आसन कर युक्ति, प्राणायाम बखाना ।

प्रत्याहार धारणा धरकर, ध्यान रहस्य का पाना ।१।

निर्विकल्प खोज समाधी पूरण, भेद विविध कर जाना ।

जीब ईश्वर की करि एकता, साधन अष्ट चित्त लाना ।२।

अन्तस्थ चित वृत्ति का समय, दशवें देव दरशाना ।

मन पवना की गति विलानी, शब्द स्वरूप समाना ।३।

उत्तम गुरु गम उत्तम योग की, उत्तम सार परमाना ।
'रामप्रकाश' लखो गम गोरख, सो गोरख निरवाना ।४।

राग आसावरी (२३) आशा पद

साधो भाई ! सो गोरख निरधारा ।

गोरख को गम गोरख जाने, हो गोरख मतबारा ।टेरा।

गो इन्द्रिय का रक्षक सोई, अपना आप लख प्यारा ।

गोरख को गोरख चेतये, गोरख गम विचारा ।१।

गोरख साधक गोरख साधन, गोरख भेद अचारा ।

गोरख उलट समावे गोरख, गोरख का विस्तारा ।२।

गोरख रामप्रकाश अखण्डित, जो जाने मुक्त मभारा ।

रामप्रकाश को लखता गोरख, और न जाएन हारा ।३।

रामप्रकाश गोरख गति चीन्ही, भया गोरख अवतारा ।

गोरख मो में मैं गोरख में, आवागमन बिडारा ।४।

राग आसावरी (२४)

साधो भाई ! या विध योग विचारा ।

शौल शौच एकान्त धारणा, संयम नियम अचारा ।टेरा।

गुरु श्रद्धा कर युक्ति लाधी, बांधी पांच पसारा ।

पूरक ओहं सो कुंभक धीरज, रेचक पवन उतारा ।१।

इडा पलट के पिंगला लाया, सुषुमण भेद अट्टारा ।

पिंगला उलट इडा सम बैठी, क्रिया स्वास गम धारा ।२।

पल विपल क्रांटक घुन साध्या, रणकार रट प्यारा ।

युक्त त्रिवेणी मुक्त त्रिवेणी, बंध त्रिवेणी सारा ।३।

युक्त बंक से उतरया सीधा, मुक्त बंक चढ़ भारा ।
 मुद्धाँ अमृत अखंडित धारा, पी अमृत निरधारा ।४।
 नाभी नागनि मुख पलटायी, दशवें में रणकारा ।
 भंवरा गरज्या गगन मंडल में, जीव शीव इकसारा ।५।
 जनम मरण का संशय काटया, मन पवना गम हारा ।
 अपना आप निजानन्द परस्या, रामप्रकाश निज न्यारा ।६।

राग आशावरी (२५)

साधो भाई ! योग युक्ति कर शोधा ।
 साधन धारण दृढ़ कर धारी, उपज्या जीवन बोधा ।टेरा।
 मन पवना का संग कर सुरता, त्रिकुटी महल में रोधा ।
 ज्ञान-साधना शस्त्र साध्या, काम मार मद योधा ।१।
 महा प्रबल मन वश करने में, गज कठिन नहीं गोधा ।
 शब्द अंकुश अभ्यास सोंकदे, लाया घेर घर खोधा ।२।
 भया निशंका निर्भय डंका, लागा गमनां पौधा ।
 फब कर बंका राव न रंका, पी रस मस्ता औधा ।३।
 रामप्रकाश पहुंच्या घर आदू योग योग में सौधा ।
 आदि आदि अनादि अपना, द्वैत भ्रम भवरोधा ।४।

राग कान्हड़ा त्रिवि योग वर्णन (१)

राग आशावरी (२६)

साधो भाई ! योग युक्ति कर जोई ।
 फूल फकर का मारग चीन्हे, बेहद की गम सोई ।टेरा।
 पांचों साथे पांचो बांधे पांचों रांधे खोई ।
 सुद्रा साथे इन्द्रिय बांधे, मल कामादिक धोई ।१।

तीनूं बंध प्राण गम तीनूं, नाड़ी तीन विलौई ।
 युक्त मुक्त ओर बंध द्विवेणी, लखे संत अनुभोई ।२।
 गोरख की गम गोरख जाने, और न जाने कोई ।
 संत लखे कोई फकर शूरमा, गुरु गम गोरख होई ।३।
 अकथ कथे अनअक्षर बांचे रामप्रकाश निरभोई ।
 सतगुरु मिले ते संशय तूटे, गूढ़ गति कहूं तोई ।४।

राग आशावरी (२७) पद

अवधू ! गगन हमारा वासा ।
 इंड पिंड ब्रह्मंड पार में रहूं आप अविनाशा ।टेरा।
 षट् चक्र को वेधे शोधे, पहुंचे शिखर अवासा ।
 कर्म भर्म में भूले डोले, मैं व्यापक सुखराशा ।१।
 अकथ कथे कोई गुरु का बाला पावे स्वयं प्रकाशा ।
 अन अक्षर का भेद पिछाने, द्वैत अद्वैत विनाशा ।२।
 गगन मंडल में वास निरन्तर नहीं दूर नहीं पासा ।
 योगी योग करे बेहद मैं, त्रिगुण तोड़ विलासा ।३।
 अखंड अनामी बेरंग पूरण, नहीं ठाकुर नहीं दासा ।
 रापप्रकाश परमानन्द चेतन नहीं तृप्त नहीं प्यासा ।४।

राग आशावरी (२८)

साधो भाई ! योगी योग कमावे ।
 योग योग में रमभ अपेची, लख परमानन्द पावे ।टेरा।
 भूल भ्रम का संशय छेड़े, साधन लगन लगावे ।
 आपा लखे खोज कर आपा, आवा गमन नहीं आवे ।१।

देहद अनहद हृद को छोड़े, उलटा पँथ चलावे ।
 पांव बिना पथ चले अफूटा, नैन बिना दर्शावे ।२।
 कान बिना बाजा सब सुणाता, रणुंकार गरावावे ।
 जिभ्या बिना गगनामृत अचबे, अभरा सभर भरावे ।३।
 गावे ज्ञान ध्यान से ध्यावे, मरहम अपना लावे ।
 रामप्रकाश गोरख घट सांही, बँधन सभी विलावे ।४।

राग मांड आशा (२६) पद

योगी ! सो घर आदू मेरा ।
 पहुंचे बिरला सतगुरु का वाला, करे अगम घर डेरा ।टेरा
 घरण गिगन बिन अधर सधर है, नहीं गुरु नहिं चेरा ।
 भरिया ताल सदा भरपूरा, नहीं मेरा नहीं तेरा ।१।
 दृष्ट मुष्ठ बिन शुन धून नाहीं, नहीं माया का घेरा ।
 अपना आप और नहीं दरशै, नहीं दूर नहीं नेरा ।२।
 गूंगा सैन लखै कर सोजी, सुरत शब्द कर हेरा ।
 पूरण अपेजी अणघड़ चैतन, सो अनुभव निरभेरा ।३।
 ध्यान योग की गति विलावे, योग होय जब सेरा ।
 रामप्रकाश आप लख गोरख, नहीं चौरासी फेरा ।४।

राग आशावरी पद (३)

साधो भाई ! सत संगत कर पाया ।
 भेद कल्पना दूर थिडारी, अभय अमाप अथाया ।टेरा
 गुरु कृपा कर साधन सोजी, अविद्या द्वैत विलाया ।
 ईश्वर जीव ब्रह्म रूप पिछाण्या, अविद्या उपाधी भाया ।१।

सत का सत से योग अनादि, दूर्मति दूर हटाया ।
 असत असत का संशय भेटया भेटयां आय अजाया ।२।
 ज्ञान ध्यान के ऊपर डंका, निर्भय निशान घुराया ।
 सदा निशंका रेख न अंका, अविगत अक्षय अकायां ।६।
 त्रिगुण त्रिकूटी भ्रम मिटाया, सब थां पूरण थाया ।
 रामप्रकाश शुद्ध तत निर्मल, गया रह्या ना आया ।४।

राम छंद भैरवी (३१) पद

कोई शोधे मन हित लाय के षट् चक्र कर्म विचारा ।टेरा।
 गुदा स्थान में चक्र अधारा दल है चार अक्षर पुनि चारा ।
 रंग तेज गणपति इष्ट प्यारा, जप संख्या छः सौ गायके ।
 सतगुरु से भेद निहारा ।१।

उपस्थ बास चक्र अधिष्ठाना ।

षट् दल अक्षर षट् परमाना,
 रवि सम रंग ब्रह्मा पति जाना । गुरु का बाल जपाय के,
 जप संख्या छह हजार ।२।
 नाभी स्थान मणिपुर जानो, दल दश अक्षर दश ही मानो ।
 रक्त वर्ण विष्णु पति आनो, जप सहस्र छह ठाय के ।
 लख भिन्न भिन्न खेल आचारा ।३।

हृदय स्थान अनाहद देखो ।

दल अक्षर द्वादश सब लेखो, रवर्ण रंग महादेव सु पेखो ।
 जप सहस्र छह पाय के, तन मंदिर सोधो प्यारा ।४।

चक्र विशुद्ध का कंठ में वासा, दल अक्षर सोलह सुखराशा ।
शशि सम रंग जीवात्मा पासा, जप एक हजार अचार के ।

लख कली कली रंग न्यारा ।४।

आज्ञा चक्र भृकुटी स्थाना, दो दल अक्षर दोय सुजाना ।
रंग लाल गुरुदेव परमाना, जप एक हजार अथाय के ।

कर सुरत शब्द इकधारा ।५।

ब्रह्मरंध्र है दश में द्वारा, बिन अक्षर दल एक हजार ।
स्फटिक मणी रंग लख प्यारा, परब्रह्म का ध्यान लगाय के ।

जप एक हजार उचारा ।६।

मन पवना सुरति संग बांधे, कोटि जप युक्ति कर साधे ।
ज्ञान ध्यान पथ इष्ट आराधे, संत रामप्रकाश मनाय के ।

सोई योगी हो निरधारा ।७।

राग छंद भैरवी (३२) पद

कोई पूरा योगी गम पाय है, अष्ट साधन योग दिचारा ।टेरा।
अहिंसा सत्य अस्तेय सुधारे, ब्रह्मचर्य अंग भेद निहारे ।
अपरिग्रह विधि कर धारे, तब यम साधन सुखदाय है ।

सिद्ध होवे काम हजार ।१।

शील शोच तप कर्म अचारा ।

सत स्वाध्याय प्रेम अंग प्यारा,

हो प्रणिधान नियम पंच धारा ।

गुरु गम साधन सजाय है, नित इष्ट जपे हरिद्वारा ।२।

साधन आसन भेद निहारा, विधि लाभ युक्ति पथ धारा ।
चौरासी में मुख्य उचारा, सिद्ध पद्मासन गाय है ।
कर पश्चिमोत्थान अपारा ।३।

इडा पींगला सूषुमण सोधे ।

पूरक कुँभक रेचक रोधे, मूल उडियान जलंधर बंधे ।
लख पल विपल मनाय है, सब युक्ति भेद आचारा ।४।
खान पान निद्रा सम धारे, आलस्य औबासी दूर निबारे ।
युक्त अहार बिहार विचारै, कर प्रत्याहार जचाय है ।
सत साधन संगत धारा ।५।

गुरु मूर्ति पद इष्ट संभारे ।

सोहं शब्द में दृढ़ता धारे,

निश्चित समय आसन थिर मारे ।
नियमित योग उपाय है, घर साधन धरणा प्यारा ।६।
ब्राटक मानस धुनि है संभारे, अक्षय शून्य प्रभा पति सारे ।
आत्म चेतन एक विचारे, गति चढ़े क्रम कर आय है ।
कर ध्यान-इष्ट उजियारा ।७।

षट् चक्रयुक्ति कर साधे ।

षट् क्रिया गम मारग लाधे, पांच क्लेश निवृत्ति बांधे ।
निरबिकल समाधि ध्याय है,

कोई सविकल समाधी न्यारा ।८।

उत्तम क्रम उत्तम विधि युक्ति, उत्तम गुरु ले परमा भक्ति ।

रामप्रकाश तब पावे मुक्ति, सत शास्त्र लक्षण सजाय के ।

अप्र आवा गमन विडारा ।६।

राग छन्द भैरवी (२३)

इण्ड पिण्ड आधार है, ब्रह्मण्ड माया विस्तारा ।६।

पांव तले तल लोक कहावे, बितल लोक चरणों पर गावे ।

सुतल लोक जानू मैं लावे, महातल साथल सार है ।

पिण्ड मांहीं ब्रह्मण्ड प्यारा ।

सांथल मूल में तलातल जानो ।

गुह्य देश में रसातल मानो, कटि में लोक पताल प्रमानो ।

यह सात लोक संसार है, सो नीचे भुवन पुकारा ।२।

भूतलोक नाभी में वासा, भूव; लोक का उदर आशा ।

स्वर्ग लोक का हृदय निवासा, महर लोक कण्ठ धार है ।

जनलोक मुख में धारा ।३।

मस्तक में तपलोक पुकारे ।

सत्यलोक ब्रह्मरन्ध्र उचारे, पुरण सिद्धांत वेदांत रु सारे ।

रामप्रकाश लख विचार है, सप्तलोक ऊपर के पारा ।४।

राग छन्द भैरवी (३४) पद

सप्तद्वीप शरीर विधान ले, लख गुरु मुख भेद उचारा ।६।

त्रिकोण हृदय में पर्वत मेरु, नीचे मन्दराचल जानो मेरु ।

दक्षिण कौण कैलाश उमेरु, वाम हिमाचल जान ले ।

तन भीतर ब्रह्मण्ड सारा ।१।

उद्ध रेखा निषध को मानो ।

दक्षिण दिशा गंधमादन जानो, रमण वाम रेखा में आनो ।

यह पर्वत सात वरमान ले लख संत सिद्धांत विचरणा ।२।

अस्थि जम्बु द्वीप पर वासा, मज्जा शाक द्वीप प्रकाशा ।

मांस मांही कुश द्वीप निवासा, नाडी क्रोच परधान ले ।

सत रोम लक्ष उचारा ।३।

त्वचा शाल्मलि दीप कहावे ।

नख में पुष्कर द्वीप रहावे सात द्वीप ब्रह्माण्ड सजावे ।

‘रामप्रकाश’ अधिष्ठान ले, तत्त्व वेता करे पुकारा ।४।

राग छन्द भैरवी (३५) पद

मैं फूल फकीरी पाय के, अब आप भया मस्ताना ।टेरा

गुरु गम निश्चल साधन शरणा,

शील सजाय धरी घट जरणा ।

भव मांही अब जनम न मरणा,

सब अविधा द्वैत मिटाय के ।

शुद्ध आप लख्या अधिष्ठाना ।१।

खेल प्रकृति करे करावे ।

गुणवंत इन्द्रिय देव उपावे, कर्म कला तन उपे खपावे ।

वपु प्रारब्ध खेल खिलाय के, नहीं हर्ष शोक का म्याना ।२।

गिरि तरु मंदिर वन घर वासा,

फाके चने मोदक मिठियासा ।

चीर दुशाले नगन निवासा, नहीं मान मर्यादा धाय के ।

अब निर्भय निशंक अवाना ॥३॥

राम प्रकाश सब घट में जान्या ।

राम प्रकाश अखण्डित मान्या,

राम प्रकाश संत शास्त्र परमान्या ।

अब धन धन वेद फरमाय के, दरशावे मग कल्याना ॥टेरा॥

राग सोरठ (३६)

फकीरी ! यः विध तपस्या ताप ।

शूरा संत फकीरी तापे, कठिन विरह की भाप ॥टेरा॥

ज्ञान गुफा प्रेम कर पलथी, आसन आशा दाप ।

नेजा नाम धर्म कर धामा, जाग्रत ज्योति अताप ॥१॥

शील शिला साधन कर सुर का, पिंड पतर में नाप ।

निरभय नेम सिंहासन साधित, छतर सोहं की छाप ॥२॥

स्मरण श्रद्धा सतचित्त आनन्द, चेतन देव अर्माप ।

चित्त चेतन ब्रह्म व्यापक सोहं, दरशे आपहि आप ॥३॥

कण्ठ कल्पना काठ कंकाली, वज्रित धिकार प्रलाप ।

अचल अखण्ड अकर्ता आत्म, जोरु जोर नही जाप ॥४॥

अनंत अनादि ज्ञान निर्मल, आंति नाहि ख्वाप ।

‘रामप्रकाश’ फकर का पूरण उत्तमराम अनाप ॥५॥

राग फकीरी, सोरठ (२७)दप

फकीरी ! संत सदा गलतान ।

मन को जीत मरजीवा डोले, नित सांचा स्तान ॥टेरा॥

साधन सहित काट जग संशय, हर्ष शोक कर हान ।
 हरदम चितन चेतन पूरण अपना आप विछान ।१।
 इच्छाचारी अहंता ममता तज, निर्विकल्प निरवान ।
 माया जाल विकार बिडारचा, शुद्ध लखा अधिष्ठान ।२।
 तीन शरीर अवस्था तीनूँ, पांच तंत तज मान ।
 गुण तज तीन कोश पंच भूँठा, आप रूप कल्याण ।३।
 'उत्तमराम' फिकर तज फुरणा, पाय फकर निज ज्ञान ।
 'रामप्रकाश' सच्चिदानन्द केवल, निज का निज सुजान ।४।

राग सोरठ (३८)

फकीरी ? करे संत बड़भाग ।
 आशा ममता मन की मारे, दृश्य द्वैत को त्याग ।।टेरा।
 पांच तीन का भगड़ा सब ही, फुरणा को तज माग ।
 मोह भनन संसृति तज सारी, आपा लखिया जाग ।टेरा।
 हंस संग साधन उर धारे, लक्षण काटया काग ।
 एक अद्वैत रमभ को समझी, तोय तरंग वत भाग ।२।
 अनव्य चेतन व्यापक सब ठाँ, ज्यूँ माला में ताग ।
 निष्ठा शुद्ध लक्ष पुनि पूरण, नहीं माया का दाग ।३।
 अनाशक्ति वपु कर व्यवहारा, त्रिगुण को नहीं फाग ।
 'रामप्रकाश' अटल अधिष्ठाना चेतन शुद्ध अलाग ।४।

राग आसावरी (३९) पद

साधो भाई ? दक दक घड़ी पुकारे ।
 पल पल घड़ी आयु की बीते घन्टे चोट उचारे ।टेरा।

रेकिंड साठ का एक मिनिट हो, वृथा स्वास क्यों हारे ।
 साठ मिनिट का एक घंटा हो, तब घड़ी यूँ ललकारे ॥१॥
 बीती ऊमर सो फेर न आवे, क्यों तू गर्व करे सुण प्यारे ।
 शिर पर काल गिनत स्वासा को, जो टकटक घड़ी धारे ॥२॥
 चार सैकण्ड में स्वासा एक हो, पंद्रह होय मिनिटारे ।
 नौ सौ स्वासा एक घण्टे में विरथा नहीं गमारे ॥३॥
 गई स्वासा की नाहीं आशा, कर शुभ कर्म सुधारे ।
 धर्म ज्ञान हरि स्मरण गुरु का, घड़ी उपदेश प्रचारे ॥४॥
 सत गुरु कहे सुणे शिष्य सांचा, कर पुरुषारथ चारे ।
 'रामप्रकाश' घड़ी की सुनलो, प्रकट जिज्ञासु सारे ॥५॥

राग हेली (४०)

हेलीए ! अनंत महिमा गुरुदेव की, कहे न पावे पार ।टेर।
 ज्ञान सुनावे ब्रह्म का काटे द्वैत विकार ।
 सत संगत निज देत है, दुर्गुण भ्रम विडार ॥१॥
 महा पापी अध जीव को, करता भव से पार ।
 मौक्ष धाम परसावता, उत्तम गुरु दरबार ॥२॥
 अनन्त ऋषि मुनि संतगण, कवि कोविद षट् चार ।
 गुरु महिमा गा गा थक्या तारया अनंत हजार ॥३॥
 एक जिभ्या मम-गुण घणो कहां तक कहूं पुकार ।
 'रामप्रकाश' समरथ गुरु, गये शेष शिव हार ॥४॥

॥ इति ॥

राग टोडी पद (४१)

अब मेरी ! लगन हरि से लागी ।
 सब ठां ईश्वर व्यापक जान्या, आप भया अनुरागी ।टेरा
 कर से करूं सोई हरि पूजा, लगन मगन रुचि जागी ।
 पद से चलूं सोई तीर्थांगन, पूर्ण रूप बड़भागी ।१।
 मुख से कहूं सोई हरि स्तवन, अष्ट पहर धुन लागी ।
 श्रवण शब्द सुने सो मंत्र, पाठ परम रुचि आगी ।२।
 देखे चक्षु सोई हरि दर्शन, अन्तर वृत्ति बागी ।
 भजन सोई प्रसाद हरि का, पावे संत वैरागी ।३।
 पांव पसार दण्डवत हरहम, सोवत चलत सभागी ।४।
 चितन करे सोई तत चेतन अबना रही अभागी ।
 घ्राण लेत सो पूजन वासना और वासना त्यागी ।
 रामप्रकाश हरि मय हम हो द्वैत दुर्मति दागी ।५।

॥ इति गोरखनाथ भजन माला समाप्त ॥



हमारे यहां मिलने वाला साहित्य हरी सागर

हरिरामजी महाराज जोधपुर वालों की वाणियों का संग्रह है। ३० आल बाद यह पुस्तक छपकर तैयार हुई है। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५०

वाणी प्रकाश

अचल आश्रम द्वारा प्रकाशित पांच संतो की वाणियों का संग्रह बड़ा ही उत्तम है, मूल्य १३)०० डाक खर्च २)५०

अचलराम भजन प्रकाश

स्वामी अचलरामजी महाराज के ४०० भजनों का संग्रह है। बड़े ही उत्तम भजन हैं। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५० अलग।

उत्तमराम अनुभव प्रकाश

श्री स्वामी उत्तमरामजी महाराज स्वामी अचलरामजी के शिष्य हैं। उनके भी करीब ४०० भजनों का संग्रह है। मूल्य १०)०० डाक खर्च २)५० अलग।

पता—आर्य ब्रदर्स बुकसेलर, पुरानी सण्डी, अजमेर।

उमारास अनुभव प्रकाश

स्वामी उमारासजी के स्वअनुभव की वाणियों के रूप में जनता को उपदेश दिए हैं वह पुस्तक रूप में छपकर तैयार है । मूल्य ८)०० डाक खर्च २)०० ।

रामप्रकाश भजनमाला

स्वामी रामप्रकाशजी उत्तरामजी महाराज के शिष्य हैं । आपने भी जनता को भजनों के रूप में एक तोफा पेश किया है । आध्यात्मिक विषय को भजनों के रूप में पेश किया है करीब १२५ भजन है मूल्य ३)५० डाक खर्च २)०० ।

ब्रह्मज्ञान भक्ति प्रकाश

स्वामी जीवादासजी महाराज ने बड़े ही परिश्रम से इस पुस्तक को तैयार की है वैदांत के गूढ़ रहस्यों को लेखनी द्वारा तथा भजनों के रूप में दिया है । बड़ी ही उत्तम पुस्तक है मूल्य ८)०० डाक खर्च २)५० ।

अनुभव प्रकाश बनानाथ

इस अनुभव प्रकाश में स्वामी बनानाथजी महाराज की वाणियां हैं । बहुत ही अच्छी पुस्तक है । मूल्य ६)०० डाक खर्च २)०० अलग ।

पता—आर्य ब्रदर्स बुकसेलर, पुरानी मण्डी, अजमेर ।

आत्म विवेक

साधू प्रतापरामजी महाराज की लिखी यह पुस्तक वेदान्त प्रेमियों के लिए बड़ी ही उत्तम है ! मूल्य ४)५० डाक खर्च २)०० अलग है ।

इनके अलावा निम्न पुस्तकें भी तैयार हैं

| | |
|--------------------------|-------------|
| अवधूत ज्ञान चिंतामणी | मूल्य ३)०० |
| नशा खंडन दरपण | मूल्य ३)५० |
| आदर्श शिक्षा | मूल्य २)०० |
| भारतीय समाज दर्शन | मूल्य १२)०० |
| विंगल रहस्य (छंद विवेचन) | मूल्य ८)०० |
| उत्तमराम अनुभव प्रकाश | मूल्य १०)०० |
| देवीदान सुगम उपचार दर्शन | मूल्य १५)०० |

नोट : पुस्तक मंगाने के लिए ५)०० मनीआर्डर से अवश्या भेजें अन्यथा लिखा-पढ़ी न करे ।

पता :—

*** आर्य ब्रदर्स बुकसेलर ***

पुरानी मंडी, अजमेर ।